श्रीमते रामानुजाय नमः श्री नित्यै नमः श्री सद्गुरवे नमः

श्री सुदर्शन संदेश

जुलाई 2017

"श्रावण मास की
हार्दिक शुभकामनाएं।"

वैकुंठवासी गुरूदेव का जन्मदिन

श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम के संस्थापक वैकुंठवासी गुरू महाराज के जन्मदिवस 27 मई के अवसर पर समारोह का आयोजन किया।1 व 2. बाबा की समाधि एवं विग्रह का पूजन करते श्रीमद जगदगुरू रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरूषोत्तमाचार्य जी महाराज, 3. शोभायात्रा में भक्तों को आशीष देते, 4. प्रसाद स्वरूप टॉफियां लुटाते, 5. महोत्सव का निरीक्षण करते गुरूजी, 6 आश्रम में मौजूद भक्त 7. हरियाणा सरकार के केबिनेट मंत्री श्री विपुल गोयलजी, विधायक श्री टेकचंद शर्मा जी एवं श्री ललित नागर जी अंग्रेजी की पुस्तक का विमोचन करते हुए। 8.प्रस्तुति एवं 9.शोभायात्रा

1

2

3

4

5

6

7

8

9

श्री सुदर्शन संदेश

वैकुंठवासी श्रीमद् जगद्गुरु रामानुजाचार्य स्वामी सुदर्शनाचार्य जी महाराज द्वारा स्थापित

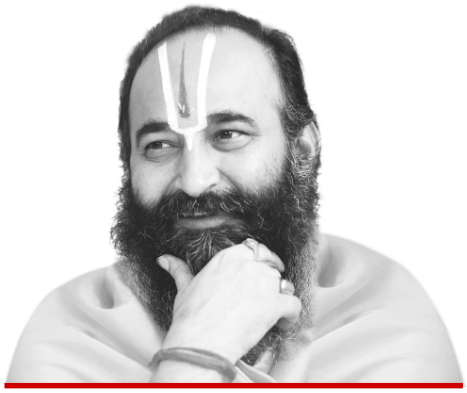

अनंतश्री विभूषित इंद्रप्रस्थ एवं हरियाणा पीठाधीश्वर श्रीमद् जगद्गुरू रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरूषोत्तमाचार्य जी महाराज

प्रवचनांश

जब व्यक्ति की प्रवृत्ति सात्विक होती है तो उसे थोड़ी ही कोशिश में अधिक आनन्द आने लगता है, वहीं तामसिक प्रवृत्ति के व्यक्ति को अनेकानेक प्रयास करने पर भी आनन्द नहीं आ पाता है। लेकिन आनन्द न आता दिखे तो निराश न हों बल्कि परमात्मा में मन रमाएं। परमात्मा प्रवृत्तियों को भी बदल देते हैं, केवल अपने भक्त का भाव देखते हैं। इस भाव में ही सभी भावों का भाव छुपा हुआ है। भाव दिखाने पर परमात्मा भी अपने भावों को छुपा नहीं पाते हैं और भक्त के जीवन में उजियारा करने के लिए स्वयं भी प्रत्यक्ष होना पड़े तो होते हैं। नरसी के लिए, धन्ना जाट के लिए, सबरी के लिए जैसे हुए।

गुरूवाणी

अपने आपको श्री चरणों में समर्पित कर दो तो सम्भव है भगवान आपके अशुभ कर्मों को छिन्न करता हुआ आपका उद्धार कर दें। किन्तु इसके लिए आस्था चाहिए, अनन्य भाव चाहिए। श्रद्धा और समर्पण चाहिए, तभी आप शरणागत कहला सकते हैं। यदि एक ओर आप में अहम् की भावना है और दूसरी ओर शरणागत होने की इच्छा है तो आपको किसी प्रकार के शुभ फल की प्राप्ति नहीं होगी। ऐसे व्यक्ति को ईश्वर कभी क्षमा नहीं करता है। समर्पण में तो एक ही भावना होती है, एक ही विश्वास होता है कि मेरा तो एक ही प्रभु है, एक ही ईश्वर है, एक ही परमपिता हैं। तब जाकर आप शरणागत कहला सकोगे और इस भव सागर से मुक्त हो सकोगे।

वैकुंठवासी महाराज

छायाचित्र

⏭ *श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम में आयोजित होने वाले समारोहों एवं अन्य जानकारियों को मोबाइल ऐप के जरिए भक्तों को पहुंचाने के लिए परम पूज्य अनंतश्री विभूषित इंद्रप्रस्थ एवं हरियाणा पीठाधीश्वर श्रीमद् जगद्गुरु रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरुषोत्तमाचार्य जी महाराज ऐप लांच करते हुए।*

पत्रिका में अपने अनुभव व लेख संपादकीय कार्यालय को भेजें।

सलाहकार मंडल : रामेश्वर सिंह, डी. सी. तंवर, के. डी. शर्मा (एडवोकेट)
संपादक : शकुन रघुवंशी (श्रीधर)*
एसोसिएट एडिटर : गीता 'चैतन्य'

संपादकीय पता: श्री सिद्धदाता आश्रम, श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम, सूरजकुण्ड रोड, सेक्टर-44, फरीदाबाद, हरियाणा फोन: 0129-2419555, 717

www.shrisidhdataashram.org
info@shrisidhdataashram.org

स्वत्वाधिकारी, जनहित मानव कल्याण केन्द्र के लिए प्रहलाद शर्मा ने मैसर्स मयंक ऑफसेट प्रोसेस, 794-95, गुरु रामदास नगर, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092 से मुद्रित करवाकर ई-9, मेन रोड, पांडव नगर, दिल्ली-110091 से प्रकाशित किया। संपादक : शकुन रघुवंशी*

*अवैतनिक

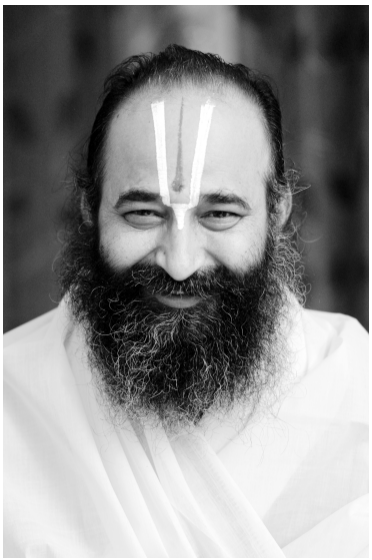

जीव ब्रह्म हो जाए

अनंतश्री विभूषित इंद्रप्रस्थ एवं हरियाणा पीठाधीश्वर
श्रीमद् जगद्गुरू रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरूषोत्तमाचार्य जी महाराज
वर्तमान पीठाधिपति-श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम

गुरूगीता : द्वितीय अध्याय

ज्ञानं वैराग्यमैश्वर्यं यशः श्रीः समुदाहृतम् षड्गुणैश्वर्ययुक्तो हि भगवान् श्रीगुरुः प्रिये।86।।
गुरुः शिवो गुरुर्देवो गुरुर्बन्धुः शरीरिणाम् गुरुरात्मा गुरुर्जीवो गुरोरन्यन्न विद्यते।।87।।

अर्थात् *समस्त गुणों को देने वाले गुरुदेव वास्तव में गुणों की खान हैं। यही कारण है कि वह सदा गुणों से भरे हुए गुणों को प्रदान करते हुए नजर आते हैं। गुरु के इन गुणों के कारण ही उन्हें भगवान के जैसे गुणनिधान भी कहा गया है। वह ज्ञान, ऐश्वर्य, यश, कीर्ति प्रदान करने वाले हैं। जैसे भगवान यह गुण प्रदान करते हैं। इसलिए गुरु भगवान के जैसे ही हैं। जैसे हम सभी जीव इस संसार एवं प्रकृति के तत्वों से बने हैं जिन्हें हम पंच महाभूत कहते हैं और इन्हीं में विलीन हो जाते हैं। लेकिन जो असली तत्व है वह आत्मा है। इस आत्मा का संबंध ही सदा चलने वाला है और सदा ही यह संबंध हमारे साथ चलते हैं। इसीलिए कहा गया है कि आत्मा का आत्मा से संबंध होने के कारण ही गुरु ही हमारे सखा, भ्राता एवं भगवान हैं। चूंकि वह गुरुतत्व हमारे ऊपर सदा ही कृपा बरसाने वाले हैं, इसलिए हमें भी गुरु के प्रति कृतज्ञ रहना चाहिए कि वह सदा हम पर कृपा रखें, सदा हमें अपनी ओट में रखें और सदैव हमारे साथ अपने संबंध को जीवंत रखें। उनके साथ हमारे संबंध से ही हमारा परमात्मा से संबंध तय होगा और बना रहेगा। आखिर हम परमात्मा की संतान आत्मा हैं और गुरु रूप में परमात्मा हमारे साथ हैं।*

अर्थ : *गुरु छह गुणों ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, यश, लक्ष्मी एवं मीठे बालों से युक्त होते हैं। मानव के लिए गुरु ही भगवान, गुरु ही देव, बन्धु, आत्मा और जीव हैं। गुरु के सिवाय कुछ अन्य नहीं है।*

जारी...

वर्ष: 14, अंक: 8
जुलाई 2017

कहां:क्या

वैकुंठवासी महाराज
चिन्तन बदलने से चिन्ता मुक्ति मिलेगी 08
मानव जीवन की सार्थकता 40

गुरुदेव
संदेश 03
गुरुवाणी 04
गुरू गीता (सरल) 05
जो इस स्थान को मानता रहेगा, उसे कृपा मिलती रहेगी 10
शरणागति कैसे हो 34

अन्य
संपादकीय 06
रिसोर्स योरसेल्फ 07
जुलाई महीने के पर्व एवं त्यौहार 42

कर्मफल का विधान

संपादकीय

गीता चैतन्य

गुरु की महिमा वेदों ने, पुराणों ने, स्मृतियों ने गाई है। बाबा नानकदेव जी ने तो बहुत ही सारतत्व में लिखा कि 'सन्त की महिमा वेद न जाने, जेता सुना तेते बखाने'। सन्त और गुरु की महिमा को वेद भी नहीं जान पाये। जिनको वेद नहीं जान पाये तो सत्संग प्रेमियो! आप और हम विचार करें कि हम उसे कैसे जान सकते हैं? हम तो केवल मान ही सकते हैं। जानने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

बाला मरदाना कहने लगे, बाबा! तुम गुरु की महिमा को कैसे लिखवा रहे हो, जब जानते ही नहीं? उन्होंने कहा–जेता सुना; मैंने सत्संग में, सद्ग्रन्थों में, सन्तों के द्वारा जितना-जितना सुना, उतना-उतना लिखवा रहा हूं।

सन्त शरण में जो पड़े सो जन उद्द्धरणहार।
सन्त की निन्दा नानका बहुर बहुर अवतार।।

सन्त के शरणागत हो जाने से ही उद्धार हो जाता है। स्वीकार कर लेने से ही उद्धार हो जाता है। उसको जानने के चक्कर में हम धर्म से पीछे हटने लग जाते हैं अर्थात् हम अपनी मंजिल तक नहीं पहुंच पाते। सन्तों के श्रीमुख का वचन है; बाबा सुखमणि साहिब में फरमान कर रहे हैं–

पारजात प्रभु हरि के नाऊँ।
कल्पवृक्ष हरि के गुण गाऊँ।

कल्प वृक्ष परमात्मा श्रीहरि का गुणगान करता है और कामधेनु गाय, उसकी कथा, उसका मनन, कीर्तन करती है। तो सन्तों का वाक्य परमात्मा के नाम स्मरण से ज्यादा जुड़ा हुआ है अर्थात् उसी को वह बार-बार फरमान करते हैं। सन्तों की वाणी, सन्तों का मार्ग, सन्त का वाक्य ही धर्म है। उनके वाक्यों को पूरा करें और भगवान् श्रीमन् नारायण का कीर्तन करें।

वह जीवन में आता है, तो शांति भी लाता है

रिसोर्स योरसेल्फ

शकुन रघुवंशी 'श्रीधर

परमात्मा जब आपके जीवन में आता है तो उसके साथ साथ शांति भी आपके जीवन में आने लगती है। मैं यह बिल्कुल नहीं कह रहा हूं कि आपके जीवन में सबकुछ अच्छा ही अच्छा होने लगता है। वरन् आपके जीवन में होने वाले गलत को भी आप धुएं में उड़ाने लगते हो। आपके अंदर वो शक्ति आ जाती है कि आप कष्टों पर भी मुस्कुराने लगते हो। आप वो हो जाते हो जो आपको होना चाहिए। लेकिन परमात्मा हमारे जीवन में आता कैसे है। वह कौन सा तरीका है कि वह हमारे जीवन में आ जाता है। बहुत सरल तरीका है, तरीका है अपने आपको पहचानने का और पहचान कराते हैं गुरु। गुरु हमें बताते हैं कि हम स्वयं को कैसे पहचानें। वह कौन सा ज्ञान है कि हम खुद को पहचान सकते हैं। गुरु बता रहे हैं कि कोई गूढ़ ज्ञान नहीं है अपितु केवल स्वीकार करना है कि हम मानव हैं और मानवता हमारा मूल गुण है। बस इतनी सी कुंजी है।

हम मानव हैं और मानवता हमारा गुण है। वह सब कार्य जो परमात्मा को प्रिय न हों, वह मानव को भी प्रिय नहीं होते हैं। धीरे धीरे आत्मा में परमात्मा की समझ विकसित होने लगती है, स्वत:।

और परमात्मा भी हमारे अंदर रुचि लेने लगता है, क्योंकि अच्छे मानव उन्हें बहुत प्रिय हैं। तो हम मानव हैं और मानवता हमारा मूल गुण! याद रहेगा! जय गुरुदेव!

बाबा का संदेश

चिन्तन बदलने से चिन्ता मुक्ति मिलेगी

मिर्च सबसे पहले रखी पर मिर्चों का नम्बर कब आया? सबसे बाद में आया। पहले दूसरी वस्तुएं हटाई, तब अन्त में मिर्चों का नम्बर आया। इसी प्रकार हमारे

वैकुंठवासी जगद्गुरू रामानुजाचार्य स्वामी सुदर्शनाचार्य जी महाराज
संस्थापक-श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम

दुखों और सुखों की एक-एक परत जमी हुई है, इस जीवन रूपी टोकरी में, पिछले जन्मों में हमने जो-जो कर्म किए, उनकी परत जमती गई। जो कर्म हमने बाद में किए हैं, उनकी परत पहले खुलेगी। हमने सड़क पर सीटी बजाई तो पहले तो तुरन्त जूते हम पर पड़ेंगे। पिछली बात तो भूल जायेंगे। आज हमने चोरी कर ली तो थानेदार हमें हथकड़ी पहनायेगा।

अपने को कर्ता न मानते हुए प्रभु की सर्व व्यापकता को स्वीकार लेना चाहिए। जब प्रभु के प्रति संकल्प शक्ति जागृत हो जायेगी, तब स्वतः ही मन और बुद्धि निर्मल हो जायेंगे। पापाचरण की प्रवृत्ति नहीं होगी। मन में दुष्कर्म के भाव तो आयेंगे ही नहीं। यह सब कुछ अनन्य भाव से शरणागति का प्रभाव है।

मेरे प्रेमियों! शरणागति सर्वश्रेष्ठ साधन है। यदि आपको सांसारिक कष्ट, सामाजिक कष्ट, भौतिकवाद के कष्ट, मानसिक चिन्ताएं मिटाने के लिए किसी उपाय की खोज है तो सबसे बड़ी औषधि एक ही है- शरणागति। शरणागति सर्वश्रेष्ठ साधन है,

जो सभी प्रकार के दु:खों को दूर करने वाला है। शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भौतिक, आदि भौतिक आदि दैविक कष्टों से मुक्ति दिलाने का महामंत्र एक ही है-शरणागति। यदि आप सुखी जीवन जीते हुए कर्म बन्धन से मुक्ति चाहते हैं, आवागमन के चक्र से मुक्त होना चाहते हैं तो शरणागति को स्वीकार कर लीजिए।

यह मेरा अनुभव सिद्ध प्रयोग है। मैं केवल ग्रन्थों में पढ़कर नहीं कह रहा हूं। यह मेरे जीवन का अनुपम प्रयोग है। जब तक हमें बल या हम जंगलों में लंगोटी लगाकर रहे जब तक शरीर बल या तप बल या जब तक आत्म बल होता है तो बीहड़ जंगल में भी किसी प्रकार के भय की आशंका नहीं रहती है। सभी प्रकार के मोहों से रहित होकर व्यक्ति आत्मानन्द का अनुभव करता हैं जिस वृक्ष के नीच के छाया मिली, वहीं आसन लगा लिया। जो कंदमूल फल मिले, उन्हीं से आहार कर लिया और जो झरनों का जल मिला, उसी से जल ग्रहण कर लिया। जब तक शारीरिक शक्ति थी, तपस्या में लगे रहे, यही साधना थी। मन में संकल्प था। हम कहते थे कि जो हम करेंगे, सो होगा। उस बल को भी हमने करके देख लिया। अनेकानेक प्रकार की सिद्धि और साधना करके देख ली और उपलब्ध वैदिक ग्रन्थ, उपनिषद् ग्रन्थ, ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक ग्रन्थ, श्रुति, स्मृतियां, पुराणादिक सभी शास्त्रों का अध्ययन करके देख लिया। षड्दर्शन का भी अध्ययन किया। अनेकानेक प्रकार के यज्ञ भी करके देख लिये। सब स्वेच्छा से किया। वे सभी प्रयोग थे और उन प्रयोगों में कुछ मिला या न मिला किन्तु आनन्द की अनुभूति अवश्य मिली।

आजकल की पीढ़ी का चिन्तन ही बदल गया है। प्रत्येक व्यक्ति का यह विचार हो गया है कि निज-व्यसन के बिना, नशे के बिना कोई व्यापार नहीं होता है। हमने वह भी करके देख लिया। हमारा सोच था कि इस माध्यम से परमात्मा का व्यापार बढ़ जाये। किन्तु उससे तो हमारा व्यापार घट गया। पता नहीं लोगों का व्यापार कैसे बढ़ता है? आज यह करते हैं और कहते हैं कि इससे हमारा व्यापार बढ़ रहा है। किन्तु यहां मैं यह कहना चाहूंगा कि हो सकता है कि आपको भौतिक उपलब्धियां हों किन्तु इनसे वैदिक पतन होगा और मनोबल घटता ही जायेगा। आपका व्यक्तित्व धूमिल हो जायेगा और आपका व्यापार घटता ही जाएगा।

क्रमश:

जब प्रभु के प्रति संकल्प शक्ति जागृत हो जायेगी, तब स्वत: ही मन और बुद्धि निर्मल हो जायेंगे। पापाचरण की प्रवृत्ति नहीं होगी। मन में दुष्कर्म के भाव तो आयेंगे ही नहीं। यह सब कुछ अनन्य भाव से शरणागति का प्रभाव है।

बाबा कहते हैं

जो इस स्थान को मानता रहेगा उसे कृपा मिलती रहेगी

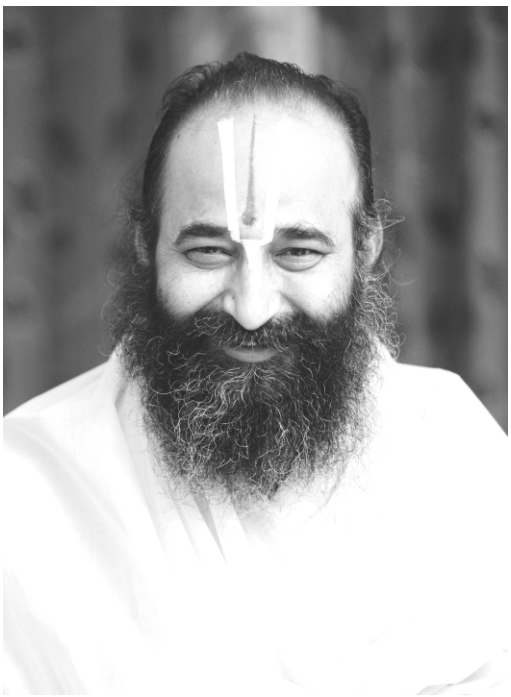

श्रीमद् जगद्गुरू रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरूषोत्तमाचार्य जी महाराज,
पीठाधिपति-श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम

आज हमारे लिए बड़ा ही शुभ दिन है। आज ही के दिन हमारे गुरु महाराज का अवतरण हुआ और आज ही के दिन श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्य धाम की नींव रखी गई।

इस अवसर पर पधारे सभी भगवदभक्तों का स्वागत है।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम।।
परित्राणाय साधुनां विनाशाय च दुष्कृताम
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे
जब जब होहि धर्म की हानि
बाढहि असुर अधम अभिमानी
तब तब प्रभु धरहि विविध शरीरा
हरहि दयानिधि सज्जन पीडा

जब जब इस संसार में अधर्म बढ़ जाता है, समाज में गलत बातें होने लगती हैं, तब तब भगवान अवतार लेकर आते हैं और अधर्म का नाश करके अपने लोक को चले जाते हैं। लेकिन धर्म की पुन: स्थापना, उसे बढ़ाने, समाज को सही दिशा देने आदि का कार्य करने के लिए वह महापुरुषों को धरती पर भेजते हैं। जिससे मानव जाति का कल्याण हो सके।

हमारे गुरु महाराज भी ऐसी ही दिव्य विभूति

थे। उन्होंने अपने जीवन काल में असंख्य लोगों का जीवन संवारा। लोगों को सद्मार्ग पर चलाया। श्री गुरु महाराज भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालों के ज्ञाता थे। वह आज भी श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम में सूक्ष्म रूप से विराजित रहकर भक्तों का कल्याण कर रहे हैं। वह भक्तों के हृदयों में विराजित होकर उन्हें आशीर्वाद प्रदान कर रहे हैं।

राम कृष्ण से को बड़ो
तिन्हुं ने गुरु कीन
तीन लोक के तारण तरण
वो भी गुरु आधीन

श्री गुरु महाराज ने अपने जीवन काल में श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्य धाम की स्थापना की।

उन्होंने सिद्धदाता नाम बड़ा सोच समझकर रखा। सिद्धदाता का अर्थ है – सिद्धों को भी देने वाला। यहां आने वाले के दैहिक, दैविक, भौतिक ताप नष्ट हो जाते हैं।

आज हम सभी का जीवन टेंशन में है।

टेंशन का अर्थ है टेन यानि दस और सन यानि सूर्य।

हम लोग इस भौतिक जगत के दस सूर्यों का ताप दिमाग पर लिए घूम रहे हैं।

हम इस जगत के एक सूर्य की गरमी से बचने के लिए तो अनेक उपाय कर लेते हैं लेकिन इस टेन सन से बचने का केवल एक उपाय है गुरु चरणों की प्रीति। महापुरुषों की शरण। श्री हरि की शरण।

गुरु महाराज कहते थे कि यह स्थान मेरा पुराना स्थान है, मैं इसका केवल पुन: निर्माण करवा रहा हूं। इस दिव्य अरावली पर्वत माला पर महर्षि पाराशर ने तप किया है, पांडवों की माता कुंती ने यहां तप किया है। ऐसी पवित्र धरा पर श्री सिद्धदाता आश्रम की स्थापना हुई है। श्री गुरु महाराज के कर कमलों से स्थापना हुई है, जिससे यह स्थान दिव्यधाम हो गया है, तीर्थ क्षेत्र हो गया है, पुण्य स्थान हो गया है।

मेरे प्रेमियो

लेकिन इसका लाभ तभी मिलेगा जब हमारी श्रद्धा व समर्पण यहां हो जाएगा।

भगवान कहते हैं

जाकि रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी

सकल पदार्थ एहि जग माहिं, कर्म हीन नर पावत नाहिं

हमें गुरु महाराज के वचनों को पालन पूरे मन से करना चाहिए। उनके प्रति हमारी यही सच्ची श्रद्धा व भाव है।

सदगुरु की महिमा को गोस्वामी तुलसीदास से समझा जा सकता है। श्री रामचरितमानस के बालकांड अर्थात प्रथम खंड में गोस्वामी जी महाराज गणपति जी को नमस्कार करते हैं–

'जेहि सुमिरत सिधि होय, गणनायक करि वर वदन।
करहु अनुग्रह सोई, बुद्धि राशि शुभ गुण सदन।।

मूक होय वाचाल पंगु चढ़े गिरिवर गहन

गुरू शरीर के साथ होकर भी शरीर नहीं है, वह आत्मा होकर भी मात्र आत्मा ही नहीं हैं, वह कृपा सागर होते हुए भी स्थिर नहीं हैं, वह धैर्यवान होते हुए भी पत्थर नहीं हैं वह तो सभी परिभाषाओं से ऊपर हैं।

जासु कृपा सो दयाल, द्रवउं सकल कलिमल दहन

भगवान को प्रणाम करते हैं–

नील सरोरुह श्याम तरुण अरुण वारिज नयन ।

करहुँ सो मम उर धाम सदा क्षीर सागर शयन ।।

महादेव को भी प्रणाम करते हैं–

गुरु पितु मात महेश भवानी

प्रनवउं दीनबंध दिन दानी

सेवक स्वामी सखा सिय पी के

हित निरुपधि सब बिधि तुलसी के

लेकिन वंदना केवल गुरु की करते हैं–

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नर रूप हरि।

महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

इस प्रकार वह गुरु का महत्व श्री रामचरितमानस के प्रारंभ में ही कर देते हैं, कहते भी हैं

सदगुरु वैद्य वचन विश्वासा,

संयम यह न विषय की आशा

गुरु के वचन प्रतीत न जेहि,

सपनेहुं सुख सुलभ न तेहि

श्री गुरु महाराज ने हमें मानवता की शिक्षा दी। धर्म की शिक्षा दी। धर्म क्या है।

परहित सरस धर्म नहीं भाई

पड पीड़ा सम नहीं अधमाई

दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान, तुलसी दया न छाडिये, तब लग घट में प्राण

परहित करना, दूसरों पर दया का भाव रखना, अन्य का सहयोग करना, सहायता करना आदि धर्म है।

ऐसे लोग जब धरती से विदा होते हैं, तब लोग उनके बिछुड़ने के दुख से रोते हैं।

हमें भी ऐसा जीवन जीना चाहिए

जब हम जन्मे तो जग हंसा और हम रोए

ऐसी करनी कर चले, हम हंसें जग रोए

हमें भी ऐसा जीवन जीना चाहिए कि लोग हमें जाने के बाद भी याद करें।

भगवान और संतों को श्रद्धाभाव, समर्पण की जरूरत होती है अन्य चीजों की नहीं। भगवान और संत कृपालु होते हैं। वह कृपा बरसाते हें।

निर्मल मन जन सो मोहि पावा

मोह कपट छल छिद्र न भावा

कोमल चित्त अति दीनदयाला

कारण बिनु रघुनाथ कृपाला

मन क्रम वचन छांडि चतुराई

भजत कृपा करिहिं रघुराई

भगवान अपने भक्त के दोष नहीं देखते, केवल भाव ही देखते हैं। तो जो भी सच्चे मन से उनको अपना मानता है और खुद को उनका शरणागत मान लेता है, भगवान ऐसे भक्त को अपनी शरण में ले लेते हैं।

हम अपने गुरु के प्रति कृतज्ञ बनें।

उनकी वाणी को, संदेश को जन जन तक पहुंचाएं। यही हमारे भक्तों का कर्त्तव्य भी है।

एक संत ने अपने शिष्यों की शिक्षा पूरी होने पर उन्हें संसार का ज्ञान लेने के लिए विदा किया।

संत ने शिष्यों के हाथ में एक मुड़ा हुआ कागज और एक फल रखकर कहा, कि इसे ऐसी जगह पर जाकर खोलना, जहां कोई देख न रहा हो और फल खा लेना। अधिकतम एक वर्ष में अपना अनुभव लेकर वापिस आना।

दोनों शिष्य राजी खुशी वहां से विदा हुआ।

एक शिष्य ने जल्द ही यह ज्ञान पाया कि दुनिया में कोई भी ऐसा स्थान नहीं है, जहां कोई देख न रहा हो। कोई नहीं देख रहा होगा तो आप खुद देख रहे होओगे। यदि आप भी नहीं देखोगे तो भगवान तो देखेंगे ही। सो, वह वापिस आकर गुरु सेवा में लग गया।

दूसरा शिष्य घने जंगलों को पार कर कंदराओं में जा पहुंचा और अंदर जाकर उसने पर्चा खोलकर पढ़ा।

उसमें लिखा था– धर्म प्रचार करो

वह भागवत कथाएं करने लगा। देखते ही देखते उसके चारों ओर लोगों की भीड़ लगने लगी।

वह एक वर्ष बाद गुरुजी के पास पहुंचा और कहा कि मैंने इतनी कथाएं कीं, इतने हजारों लोगों को धर्म के बारे में बताया। मेरे इतने हजार शिष्य हैं। और आप आना मैं यहीं शहर में कथा करने आया हूं। एक लाख आदमी मेरी कथा सुनने आएगा।

गुरु भांप गए, कि इसके अंदर अहंकार आ गया है।

उन्होंने कहा, ठीक है, कथा सुनने अवश्य आएंगे।

कथा के पहले दिन एक लाख आदमी पहुंचे।

शिष्य ने कहा, मैंने बोला था न कि एक लाख आदमी आएंगे।

गुरु ने परीक्षा लेने की दृष्टि से पूछा, इनमें से कोई तुम्हारे लिए अपने प्राण भी दे सकता है, क्या। मुझे एक पूजा करनी है जिसके लिए नर बलि देनी है।

शिष्य बोला, कल तो प्राण न्यौछावर करने वालों की लाइन लग जाएगी। मैं अभी अनाउंसमेंट करवा देता हूं।

अनाउंसमेंट करवा दी गई कि एक पूजा के लिए संत को नर बलि देनी है, जिन व्यक्ति को अपने प्राण देने हों, वह कल अपने नाम लिखवा दें।

अगले दिन भीड़ की संख्या आधी रह गई। केवल 50 हजार ही लोग आए।

गुरु बोले, रोज अनाउंस करो कि कथा के आखिरी दिन नर बलि ली जाएगी।

धीरे धीरे रोज लोगों की संख्या घटने लगी। अंतिम दिन एक व्यक्ति बचा। जो नर बलि देने को तैयार था।

वह गुरु का दूसरा शिष्य था, जो उनकी सेवा में लौट आया था।

इस पर गुरु ने कहा, कि लाखों लोग दिखावे के थे। वह सब लौट गए हैं। केवल तू और तेरा यह साथी ही बचे हैं।

संत बोले, गुरु को छोड़कर खुद गुरु बनने की जल्दी में जो रहता है, उसके साथ कोई नहीं होता है। वह आखिर में खाली हाथ होता है। लेकिन जो गुरु के साथ रहता है, गुरु की सेवा में रहता है, गुरु के वचनों में रहता है, वह गुरु की कृपाओं को हमेशा प्राप्त करता है।

अब तक कथा वाचक बन चुके शिष्य का अहंकार नष्ट हो चुका था और वह गुरु के चरणों में पड़ गया।

श्री गुरु महाराज ने कहा कि इस स्थान को मानने वालों के जीवन में धर्म अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति होगी ही। जो भी जैसी भी आस्था व विश्वास के साथ यहां आएगा, उसे उसके अनुरुप प्राप्ति होगी। जो इस स्थान को मानता रहेगा, उसे कृपा मिलती रहेगी।

(वैकुंठवासी बाबा के धरावतरण दिवस पर श्रीमद जगदगुरु स्वामी श्री पुरुषोत्तमाचार्य जी महाराज द्वारा दिया गया प्रवचन)

गौसेवा करने से अनेक तीर्थों का अक्षय पुण्य प्राप्त होता है

हमारे आश्रम द्वारा संचालित श्री नारायण गौशाला में सैकड़ों गौएं रहती हैं। यहां अनेकों सेवादार गौसेवा कर पुण्य प्राप्त कर रहे हैं। आप भी इस पुण्य के भागी बन सकते हैं। यथायोग्य सेवा, चारा, दवाईयों की सेवा आप भी कर सकते हैं। इस पुण्य कार्य में सहयोग करें।

सम्पर्क करें:– श्री सिद्धदाता आश्रम, श्री लक्ष्मीनारायण दिव्य धाम, सूरजकुण्ड–बड़खल मार्ग, फरीदाबाद (हरियाणा) भारत। दूरभाष:– 0129-2419555, 2419717Or E-mail at: **info@shrisidhdataashram.org**

स्तंभ

अपने मन को समझना होगा

मन से जीवन की दिशा तय होती है लेकिन ये बड़ा चंचल होता है। इसे समझना आसान नहीं है।

हमेशा उन विचारों को दूर करने की कोशिश करें जो मन को दुख पहुंचाने वाले हैं। उन बातों को भी मन पर बिल्कुल हावी न होने दें जो आपके अंदर नकारात्मकता भरती हैं।

तुम जीवन को निष्काम बनाओ। तुम्हारा जीवन लोक कल्याण में लग जाये। तुम दूसरों के काम आओ।

अक्सर मन इधर-उधर भागने लगता है। ऐसे में उसे भागने दो। उसे जबरदस्ती पकड़कर रोकने की कोशिश न करो। इसके बाद इसके पीछे जाओ और इसे वापस ले आओ।

इंसान स्वयं अपने मन को खुश रखने के लिए जिम्मेदार है। ऐसे में उसे यह दृढ़ संकल्प करना जरूरी है कि चाहे कुछ भी हो जाए, कोई भी व्यक्ति मेरी खुशी नहीं छीन सकता।

जीवन को एक सही दिशा देने में मन की विशेष भूमिका होती है। जीवन में ऐसा कुछ नहीं है, जिसके प्रति बहुत गंभीर रहा जाए। यह हाथों में खेलने के लिए एक गेंद है। इसे पकड़े मत रहो।

इंसानी जीवन में इच्छा को कभी भी खुद पर हावी न होने दो। इच्छा हमेशा अकेले मैं शब्द पर लटकती रहती है। ऐसे में जब इंसान मैं का त्याग कर देता है, तब इच्छा भी समाप्त हो जाती है।

जीवन को लेकर गहराई से सोचिए। अतीत में बहुत सी समस्याएं आई थीं, जो आज नहीं हैं। वे आईं और चली गईं। यह भी

चली जाएगी। आपमें उसको जीतने की ताकत और ऊर्जा है। इससे आत्मविश्वास जागेगा।

मन जब भी विचलित हो तब दुनिया के उस हिस्से को देखें, जहां और ज्यादा बड़ी समस्याएं हैं। जब इंसान उन बड़ी-बड़ी समस्याओं को देखेगा तो उसको अपनी समस्या बहुत छोटी लगने लगेगी।

अक्सर समस्याओं में लोग दूसरों को पुकारते हैं। जबकि यदि लोग अपने मन को अंतर्मुख करें तो समाधान उन्हें अपने में ही मिल जाएगा। बस कुछ समय निकाल कर खुद के अंदर झांकने की जरूरत होती है।

हमेशा आराम की चाहत से लोग आलसी हो जाते हैं। इतना ही नहीं पूर्णता की चाहत में क्रोधित और अमीर बनने की चाहत में लालची भी हो जाते हैं। ऐसे में न तो आप बहुत ज्यादा लापरवाह हों और न ही बेचैन हों।

याद रखें कि यदि आप अपने मन को जीत लेते हैं, तो आप सारा संसार जीत सकते हैं। जब अशांत हो तो गाने बजाने और भजन करने से मन अपने आप शांत हो जाता है।

बिना गुरूभक्ति के आश्रय असंभव

साधना की उच्च अवस्था में नाद, बिन्दु, बीज तथा विवेक, मन, हृदय, अस्तित्व हीन हो जाते हैं। साधना नाम ही है अनेक से एक और यमन का। माया अनेकता के संसार की जननी है और मायापति परम एकत्व का बोध। जब कोई साधक अपने अन्दर गहरे उतर जाता है तो उसे पता चलता है हृदय कहीं जाता नहीं और मन कभी एक जगह रुकता नहीं, जो चंचल है उसे ही शांत करने के उपक्रम का नाम है साधना। इसे एक बिन्दु पर लाने के अनेक मार्गों का अनुसंधान इस पथ के यात्रियों ने किया है। उन अनेक मार्गों में से मौन मार्ग का अभ्यास करने वाला साधक जब शांति के महासागर में सहज प्रवेश करता है तो वह स्थिति अवगति गति के अनिवर्चनीय भाव की होती है। इस समाज का सीधा संबंध नारी तथा लक्ष्मी से होता है। भोजन, पानी, आवास, वस्त्र और शिक्षा की ही भांति नारी का सम्मान और लक्ष्मी सदुपयोग अपेक्षित है। गृहस्थाश्रम में नारी और लक्ष्मी इड़ा-पिंगला की भांति है। साधक वो हैं जो इनके बीच की समस्थिति अर्थात सुषम्ना के मार्ग से अपनी यात्रा को जोड़कर गंतव्य की ओर बढ़ते हैं। बिना कुछ छोड़े, बिना पलायन के मौन में स्थित हुआ जा सकता है और शांति के महासागर में उतरा जा सकता है। जब व्यक्ति तनकर खड़ा हो जाता है उस समय हर बंधन शिथिल होकर अपने को धन्य मानता है। मौन में स्थित होना, शांति के सागर में अवतरण या सुषुम्ना से गमन करना बिना गुरुशक्ति के आश्रय के असंभव है।

प्रक्रिया

साधना और अध्यात्म

हम नीले आकाश को निहारते हैं। विचित्र बात यह है कि हमें दिव्य प्रकाश के बारे में कुछ भी पता नहीं है, फिर भी उसे नीला मान लेते हैं। साधना और आध्यात्मिक प्रगति के बारे में कोई धारणा नहीं पालनी चाहिए। ऐसी धारणाएं ही मार्ग की बाधाएं बन जाती हैं। साधना के साथ-साथ दृष्टिकोण भी सही होना चाहिए। उदाहरण के लिए हम नीले आकाश को निहारते हैं। विचित्र बात यह है कि हमें

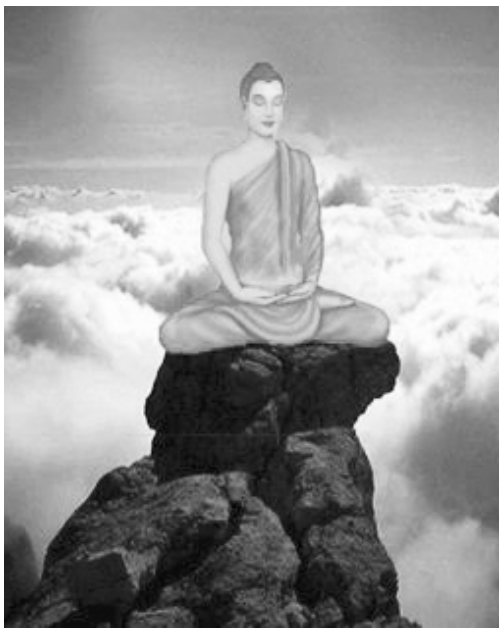

समस्त साधनाओं का लक्ष्य हर परिस्थिति में मन को शांत रखना

दिव्य प्रकाश के बारे में कुछ भी पता नहीं है, फिर भी उसे नीला मान लेते हैं। यह भी संभव है कि दिव्य प्रकाश देखने के बावजूद नीले प्रकाश की प्रतीक्षा करते रहते हों। समस्त साधनाओं का लक्ष्य हर परिस्थिति में मन की शांति को बनाए रखना है। अन्य बातें, जैसे-प्रकाश, ध्वनि या कोई रूप-आकार तो आते-जाते रहेंगे। यदि ऐसा कुछ अनुभव हो जाए, तो वह अस्थायी ही होगा। स्थायी अनुभव केवल पूर्ण शांति का ही है। शांति व समता का अनुभव ही आध्यात्मिक जीवन का वांछित परिणाम है। पर ऐसे अनुभवों की कामना करना जरूरी नहीं है, क्योंकि इससे व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास धीमा हो जाता है। यदि ऐसे अनुभव अपने आप होते हैं तो होने दें, लेकिन उन्हें महत्व न दें। यह बहुत जरूरी है कि प्रारंभ से ही आध्यात्मिक जीवन के बारे में सुस्पष्ट, स्वस्थ एवं बुद्धिसम्मत धारणा बना ली जाए। ऐसा नहीं है कि आध्यात्मिक व्यक्ति कुछ अलग जीवन जीते हैं। अन्य लोगों की तरह उनका भी जीवन सामान्य होता है। सिर्फ जीवन और उनके अनभुवों को देखने की उनकी दृष्टि अलग होती है।

जानकारी

स्वभाव जीवन भर साथ रहता है

स्वभाव या आदत व्यक्ति के जन्म के साथ आती है और जीवन भर साथ रहती है दूसरे का अपमान करने वाला स्वयं ही समाज की नजरों में गिर जाता है, कुरुचिपूर्ण स्वभाव से बचें। ऐसे व्यवहार से व्यक्ति अंत में पतन की ओर ही उन्मुख होता है। रुचि का अर्थ है- स्वभाव या आदत। यह व्यक्ति के जन्म लेते ही

अपनी गलती के लिए माफी मांगना और सामने वाले का उसे माफ कर देना इंसानियत का श्रेष्ठ गुण है।

इसके साथ आती है और जीवन भर इसके साथ रहती है। इसे बदल पाना संभव नहीं होता है। जब रुचि को स्वभाव कहा गया तो यह कह दिया गया कि यह अपरिवर्तनीय है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि जिसका जन्म हुआ है उसका मरण अवश्य होगा। इसी तरह से जिसका मरण होता है उसका जन्म भी अवश्य होता है। इसलिए व्यक्ति का जो स्वभाव होता है वह उसके पिछले जन्म के संस्कारों के साथ जुड़ा होता है और यह स्वभाव सभी का अपना अलग-अलग होता है। यह स्वभाव जब कुत्सित विचारों से प्रभावित होता है, तब चाहे कोई बालक हो, युवक हो, प्रौढ़ हो अथवा वृद्ध हो ऐसा व्यवहार करने लगता है जो न उसके स्वयं के लिए कल्याणकारी होता है और न उसके परिवार और समाज के लिए ही कल्याणकारक होता है। ऐसा बालक उद्दंड, क्रोधी और सभी की उपेक्षा करने वाला होता है और वह किसी की भी उपेक्षा करने में संकोच नहीं करता। फिर चाहे उसके मातापिता ही क्यों न हों। यही उसकी कुरुचि होती है। इसी तरह से जो कुरुचि वृत्ति वाला युवक होता है वह शिक्षा-प्राप्ति के प्रति नितांत रूप से लापरवाह होता और उसके मन में किसी

के प्रति भी आदरभाव नहीं होता। फिर चाहे उसे शिक्षा देने वाले उसके गुरुजन ही क्यों न हों। जब कोई कुरुचिपूर्ण विचारों वाला होता है तो वह अपने धन, विद्या, व्यवसाय आदि को लेकर इतना अहंकारी होता है कि वह किसी को भी अपने बराबर नहीं समझता। सभी को अपने से छोटा मान कर सभी के साथ तिरस्कार भरा व्यवहार करता है। अपने परिवारजनों के प्रति उसके मन में अपनत्व का भाव नहीं होता। पड़ोसियों के सुख-दुख में कभी सम्मिलित नहीं होता और सबसे स्वयं को अधिक बुद्धिमान मानकर ऐंठा-ऐंठा सा बना रहता है। कभी-कभी तो सुबुद्ध कहे जाने वाले और कथित शिक्षित भी अपने ज्ञान का घमंड लेकर दूसरों से तर्क-कुतर्क करता है और दूसरे को नीचा दिखाकर गौरवान्वित होता है। वह यह भूल जाता है कि दूसरे का अपमान करने वाला स्वयं ही समाज की नजरों में गिर जाता है। इसलिए कुरुचिपूर्ण स्वभाव से बचें। ऐसे व्यवहार से व्यक्ति अंत में पतन की ओर ही उन्मुख होता है।

धर्म चिन्तन

जिंदगी में हमें जो धारण करना चाहिए, वही धर्म है। नैतिक मूल्यों का आचरण ही धर्म है। धर्म वह पवित्र अनुष्ठान है जिससे चेतना का शुद्धिकरण होता है। धर्म वह तत्व है जिसके आचरण से व्यक्ति अपने जीवन को चरितार्थ कर पाता है। यह मनुष्य में मानवीय गुणों के विकास की प्रभावना है, सार्वभौम चेतना का सत्संकल्प है। धर्म के मुख्यत: दो आयाम हैं। एक है संस्कृति, जिसका संबंध बाहर से है। दूसरा है अध्यात्म, जिसका संबंध भीतर से है। धर्म का तत्व भीतर है, मत बाहर है। तत्व और मत दोनों का जोड़ धर्म है। इस जीवन की कितनी गरिमा है। इस जीवन की कितनी क्षमता है। अनंत आनन्द का खजाना, जो हमारे भीतर है, उसकी ओर हम पीठ करके जीते हैं। आज के गति प्रधान युग ने यह चेतना प्रदान की है कि विकास का रास्ता हमें स्वयं बनाना है,और विश्व के कदम ताल में कदम मिलाना है। किसी समाज या देश की समस्याओं का समाधान कर्म-कौशल, व्यवस्था-परिवर्तन, वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास, परिश्रम तथा निष्ठा से सम्भव है। मनुष्य की रुचि अपने वर्तमान जीवन को सँवारने में अधिक है। उसका ध्यान भविष्योन्मुखी न होकर वर्तमान में है,जो हम आप और सारे मनुष्य गण जीवन में अपनाते हैं।

सामयिक

जानें आचमन का महत्व

संध्या वंदन के समय मंदिर या एकांत में शौच, आचमन, प्राणायामादि कर गायत्री छंद से निराकार ईश्वर की प्रार्थना की जाती है। संध्या वंदन के समय मंदिर या एकांत में शौच, आचमन, प्राणायामादि कर गायत्री छंद से निराकार ईश्वर की प्रार्थना की जाती है। संधिकाल में ही संध्या वंदन किया जाता है। वेदज्ञ और ईश्वरपरायण लोग इस समय प्रार्थना करते हैं। ज्ञानीजन इस समय ध्यान करते हैं। भक्तजन कीर्तन करते हैं। पुराणिक लोग देवमूर्ति के समक्ष इस समय पूजा या आरती करते हैं। तब सिद्ध हुआ की संध्योपासना या हिन्दू प्रार्थना के चार प्रकार हो गए हैं- (1)प्रार्थना-स्तुति, (2)ध्यान-साधना, (3)कीर्तन-भजन और (4)पूजा-आरती। व्यक्ति की जिस में जैसी श्रद्धा है वह वैसा करता है।

जब व्यक्ति शरीर, मन, वचन और कर्म से शुद्ध रहता है तब उसे स्वास्थ्य और सकारात्मक ऊर्जा का लाभ मिलना शुरू हो जाता है।

भारतीय परंपरा में पूजा, प्रार्थना और दर्शन से पहले शौचा और आचमन करने का विधान है। बहुत से लोग मंदिर में बगैर शौच या आचमन किए जले जाते हैं जो कि अनुचित है। प्रात्येक मंदिर के बाहर या प्रांगण में नल जल की उचित व्यवस्था होनी चाहिए जहां व्यक्ति बैठकर अच्छे से खुद को शुद्ध कर सके। जल का उचित स्थान नहीं है तो यह मंदिर दोष में गिना जाएगा।

शौच का अर्थ : शौच अर्थात शुचिता, शुद्धता, शुद्धि, विशुद्धता, पवित्रता और निर्मलता। शौच का अर्थ शरीर और मन की बाहरी और आंतरिक पवित्रता से है।

आचमन से पूर्व शौचादि से निवृत्त हुआ जाता है। शौच का अर्थ है अच्छे से मल-मूत्र त्यागना भी है। शौच के दो प्रकार हैं- बाह्य और आभ्यन्तर। बाह्य का अर्थ बाहरी शुद्धि से है और आभ्यन्तर का अर्थ आंतरिक अर्थात मन वचन और कर्म की शुद्धि से है। जब व्यक्ति शरीर, मन, वचन और कर्म से शुद्ध रहता है तब उसे स्वास्थ्य और सकारात्मक ऊर्जा का लाभ मिलना शुरू हो जाता है।

शौच के दो प्रकार हैं- बाह्य और आभ्यन्तर। बाहरी शुद्धि- हमेशा दातुन कर स्नान करना एवं पवित्रता बनाए रखना बाह्य शौच है। कितने भी बीमार हों तो भी मिट्टी, साबुन, पानी से थोड़ी मात्रा में ही सही लेकिन बाहरी पवित्रता अवश्य बनाए रखनी चाहिए। आप चाहें तो शरीर के जो छिद्र हैं उन्हें ही जल से साफ और पवित्र बनाए रख सकते हैं। बाहरी शुद्धता के लिए अच्छा और पवित्र जल-भोजन करना भी जरूरी है। अपवित्र या तामसिक खानपान से बाहरी शुद्धता भंग होती है।

आंतरिक शुद्धि- आभ्यन्तर शौच उसे कहते हैं जिसमें हृदय से रोग-द्वेष तथा मन के सभी खोटे कर्म को दूर किया जाता है। जैसे क्रोध से मस्तिष्क और स्नायुतंत्र क्षतिग्रस्त होता है। लालच, ईर्ष्या, कंजूसी आदि से मन में संकुचन पैदा होता है जो शरीर की ग्रंथियों को भी संकुचित कर देता है। यह सभी हमारी सेहत को प्रभावित करते हैं। मन, वचन और कर्म से पवित्र रहना ही आंतरिक शुद्धता के अंतर्गत आता है अर्थात अच्छा सोचे बोले और करें। आचमन का अर्थ होता है जल पीना। प्रार्थना, दर्शन, पूजा, यज्ञ आदि आरंभ करने से पूर्व शुद्धि के लिए मंत्र पढ़ते हुए जल पीना ही आचमन कहलाता है। इससे मन और हृदय की शुद्धि होती है। आचमनी का अर्थ एक छोटा तांबे लोटा और तांबे की चम्मच को आचमनी कहते हैं। छोटे से तांबे के लोटे में जल भरकर उसमें तुलसी डालकर हमेशा पूजा स्थल पर रखा जाता है। यह जल आचमन का जल कहलाता है। इस जल को तीन बार ग्रहण किया जाता है। माना जाता है कि ऐसे आचमन करने से पूजा का दोगुना फल मिलता है।

आचमन सदैव उत्तर, ईशान या पूर्व दिशा की ओर मुख करके ही किया जाता है अन्य दिशाओं की ओर मुंह करके कदापि न करें। संध्या के पात्र तांबे का लोटा, तारबन, आचमनी, टूक्कस हाथ धोने के लिए कटोरी, आसन आदि लेकर के गायत्री छंद से इस संध्या की शुरुआत की जाती है। प्रात:काल की संध्या तारे छिपने के बाद तथा सूर्योदय पूर्व करते करते हैं।

एवं स ब्राह्मणों नित्यमुस्पर्शनमाचरेत्।

ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं जगत् स परितर्पयेत्॥

प्रत्येक कार्य में आचमन का विधान है। आचमन से हम न केवल अपनी शुद्धि करते हैं अपितु ब्रह्मा से लेकर तृण तक को तृप्त कर देते हैं। जब हम हाथ में जल लेकर उसका आचमन करते हैं तो वह हमारे मुंह से गले की ओर जाता है, यह पानी इतना थोड़ा होता है कि सीधे आंतों तक नहीं पहुंचता। हमारे हृदय के पास स्थित ज्ञान चक्र तक ही पहुंच पाता है और फिर इसकी गति धीमी पड़ जाती है। यह इस बात का प्रतीक है कि हम वचन और विचार दोनों से शुद्ध हो गए हैं तथा हमारी मन:स्थिति पूजा के लायक हो गई है।

जीवन

प्रयास के बिना कुछ संभव नहीं

गीता में भी कृष्ण ने अर्जुन को यही उपदेश दिया था- कर्म ज्यायो ह्यकर्मण:! अर्थात कर्म करने वाला व्यक्ति निष्क्रिय रहने वाले से श्रेष्ठ है। हमारे नीति शास्त्रों में इस बात को एक उदाहरण द्वारा समझाया गया है। कि मंदगति वाली चींटी भी अपने कर्मठ स्वभाव के कारण सैकड़ों योजन तक चली जाती है, किंतु न चलता हुआ गरुड़

यदि सौभाग्य से कर्म के साथ प्रतिभा का भी योग हो, तो सोने में सुगंध के समान है।

जैसा तीव्रगामी पक्षी एक कदम भी नहीं चल सकता। अक्सर लोग शिकायत करते हैं कि मेरे पास समय नहीं है, नहीं तो मैं बहुत कुछ कर सकता हूं- सुंदर कविताएं और कहानियां लिख सकता हूं। ऐसे संकल्पों का दावा करने वाले व्यक्ति से प्रश्न किया जा सकता है कि इन कार्यों को संपन्न करने वाले दूसरे व्यक्तियों को भी दिन के 24 घंटे ही प्रत्येक प्रात: काल ईश्वर द्वारा प्रदान किए जाते हैं। तब आपके पास ही समय का अभाव क्यों रहता है ? असल में वह काम हमारी प्राथमिकता में नहीं होता, जिसे हम समय मिलने पर करने का दावा करते हैं।

इसके अलावा वास्तविकता यह है कि किसी भी कार्य में आगे बढ़ने के लिए कर्मठता की विशेष आवश्यकता होती है। लेकिन साबुन तथा पानी की व्यवस्था होने पर भी क्या अपने मैले कपड़े बिना इच्छा और उचित परिश्रम के धोए जा सकते हैं? भोजन पकाने के लिए आटा, दाल, सब्जी, नमक, मसाले तथा स्टोव आदि की व्यवस्था करनी ही होगी। लेकिन तब भी क्या बिना समुचित प्रयास किए भोजन की प्राप्ति संभव है? श्रम जरूरी है। साधन और सामग्री हो, लेकिन श्रम नहीं हो तो कुछ भी नहीं किया जा सकता।

आवश्यक

कर्म करने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ होता है

संसार में मनुष्य की प्रतिष्ठा का सबसे बड़ा आधार उसका कर्म है। गीता में भी कृष्ण ने अर्जुन को यही उपदेश दिया था- कर्म ज्यायो ह्यकर्मण: ! अर्थात कर्म करने वाला व्यक्ति निष्क्रिय रहने वाले से श्रेष्ठ है। यदि सौभाग्य से कर्म के साथ प्रतिभा का भी योग हो , तो सोने में सुगंध के समान है। वैसे कर्मठ व्यक्ति प्रतिभा संपन्न न होने पर भी संसार में दूसरे निष्क्रिय प्राणियों से सदा ही श्रेष्ठ होता है। प्रतिभासंपन्न व्यक्ति कर्मठता के अभाव में अपनी योग्यता का समुचित उपयोग नहीं कर पाता। हमारे नीति शास्त्रों में इस बात को एक उदाहरण द्वारा समझाया गया है। कहा गया है कि मंदगति वाली चींटी भी अपने कर्मठ स्वभाव के कारण सैकड़ों योजन तक चली जाती है , किंतु न चलता हुआ गरुड़ जैसा तीव्रगामी पक्षी एक कदम भी नहीं चल सकता।

किसी भी कार्य में आगे बढ़ने के लिए कर्मठता की विशेष आवश्यकता होती है। भौतिक साधनों का अपना महत्व है।

अक्सर लोग शिकायत करते हैं कि मेरे पास समय नहीं है, नहीं तो मैं बहुत कुछ कर सकता हूं- सुंदर कविताएं और कहानियां लिख सकता हूं। अच्छे-अच्छे चित्रों और मूर्तियों का निर्माण कर सकता हूं। समाज का मार्गदर्शन करने वाले ऐसे सत्साहित्य का सर्जन कर सकता हूं, जिसे पढ़कर लोगों में फैला अंधविश्वास,

भ्रष्टाचार स्वयं ही दूर होने लगेगा और नैतिक पतन रुकेगा। ऐसे संकल्पों का दावा करने वाले व्यक्ति से प्रश्न किया जा सकता है कि इन कार्यों को संपन्न करने वाले दूसरे व्यक्तियों को भी दिन के 24 घंटे ही प्रत्येक प्रात:काल ईश्वर द्वारा प्रदान किए जाते हैं। ठीक उतना ही समय प्रत्येक उषा आपकी झोली में भी डाल देती है, तब आपके पास ही समय का अभाव क्यों रहता है ? असल में वह काम हमारी प्राथमिकता में नहीं होता, जिसे हम समय मिलने पर करने का दावा करते हैं। इसके अलावा वास्तविकता यह है कि किसी भी कार्य में आगे बढ़ने के लिए कर्मठता की विशेष आवश्यकता होती है। भौतिक साधनों का अपना महत्व है। लेकिन साबुन तथा पानी की व्यवस्था होने पर भी क्या अपने मैले कपड़े बिना इच्छा और उचित परिश्रम के धोए जा सकते हैं ? हमें वस्त्रों के साथ साबुन तथा पानी का समुचित योग करना ही पड़ेगा। भोजन पकाने के लिए आटा , दाल , सब्जी , नमक , मसाले तथा स्टोव आदि की व्यवस्था करनी ही होगी। लेकिन तब भी क्या बिना समुचित प्रयास किए भोजन की प्राप्ति संभव है ? श्रम जरूरी है। साधन और सामग्री हो , लेकिन श्रम नहीं हो तो कुछ भी नहीं किया जा सकता।

याद रखिए, अगर हम किसी की एक गलती माफ करेंगे, तो भगवान हमारी सौ गलतियाँ माफ करेंगे।

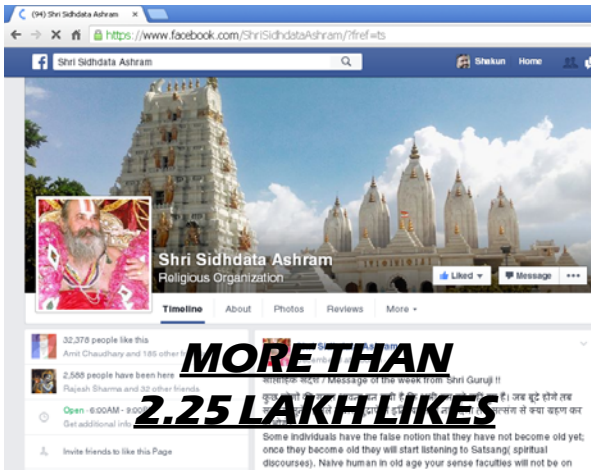

श्री सिद्धदाता आश्रम फेसबुक पर भी

श्री सिद्धदाता आश्रम में आयोजित होने वाले पर्वों एवं क्रियाकलापों की जानकारी फेसबुक पर पाने के लिए नीचे दिए गए लिंक पर जाकर लाइक करें।

www.facebook/shrisidhdataashram

Shri Sidhdata Ashram is now on Facebook.

You can watch photographs of latest events, weekly message from Shri Guruji ans get regulat updates from Ashram on your facebook account.

To receive updates on your Facebook account visit Ashram's FB page

www.facebook.com/shrisidhsataashram

and click on Like

also do visit our website www. shrisda.org to watch latest News, Updates, Photographs and to download Books, Monthly Magazine and Wallpapers.

भक्ति

प्रार्थना कैसे की जाए

नमस्कार का अर्थ है - प्रशंसा। इसमें हम जिसकी स्तुति कर रहे हैं, उसके गुणों का, उसकी महिमा का वर्णन प्रधान रहता है। प्रार्थना का अर्थ है - याचना करना। हम अपने लिए कोई दया, कृपा आदि चाहते हैं और उसे मांगते हैं इसलिए प्रार्थना व्यक्तिगत क्रिया है। जब आपका हृदय व्याकुल हो, जब आप जगन्नियंता से कुछ पाने को सचमुच समुत्सुक हैं, वही प्रार्थना का सबसे उत्तम समय है। वह दिन हो या रात्रि, इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है। हमारी प्रत्येक क्रिया प्रभु को समर्पित होनी चाहिए। जहां आपका चित्त प्रभु के सम्मुख उपस्थित होने को आतुर हो उठे, वहीं प्रार्थना कीजिए। ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहां वह दीनदयाल उपस्थित नहीं हैं। आप संसार तथा शरीर को भूलकर केवल परमात्मा के सम्मुख रहने का प्रयास करें। यह बात आप पर ही निर्भर है कि आपको कैसे प्रार्थना करना अनुकूल पड़ता है। प्रार्थना जप या पाठ नहीं है। यह आपके हृदय की मांग प्रभु के सम्मुख उपस्थित करने की परिपाटी है। आप अपनी प्रार्थना में श्लोक, पद्य, स्तोत्र रख सकते हैं, किंतु उन्हें प्रतिदिन की प्रार्थना में रखते-रखते पाठ मत बनने दीजिए। जब भी आपके हृदय के भाव उनसे जाग्रत न हों, उन्हें बदल देने में संकोच मत कीजिए। उत्तम प्रार्थना वह है, जिसके शब्द पहले से निश्चित नहीं हैं।

हम जिसकी वंदना करते हैं, उसके जो आभार-उपकार हमारे ऊपर हैं।

सामयिक

बडों के पैर क्यों छूने चाहिए

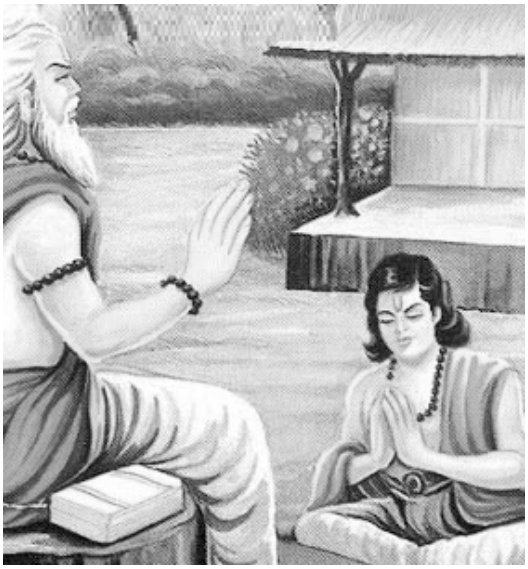

अपने से बड़ों के पैर छूकर आशीर्वाद प्राप्त करना न सिर्फ एक अच्छा आचरण माना जाता है, बल्कि प्यार बनाए रखने में भी सहायक सिद्ध होता है। पैर छूने के भी अनेक तरीके हैं।

आम तौर पर झुककर पैरों या जूतों को हाथ लगाकर सम्मान दिया जाता है।

(गुरु जी ने चेले को समझाया शारीरिक बल के साथ साथ दांव पेंच भी महत्व रखते हैं।) लेख - डीसी तंवर

कुछ लोग बस थोड़ा सा झुककर, हाथ नीचे ले जाकर भी यह रस्म पूरी कर देते हैं। क्या हमने कभी सोचा है कि यह रस्म क्यों है और इससे हमें क्या लाभ है। यदि नहीं तो हम आपको आज पैर छूने के बारे में कुछ जानकारी देने का प्रयास कर रहे हैं।

भारतीय संस्कृति में बड़ों का सम्मान व सेवा का व्यवहार एवं संस्कार में बहुत ही महत्व बताया गया है। तमाम हिन्दू धर्मग्रन्थ जैसे रामायण, महाभारत आदि में बड़ों के सम्मान को सर्वोपरि बताया गया है। इनमें मात-पिता, गुरु, बड़े भाई सहित सभी बुजुर्गों के सम्मान के प्रसंगों में बड़ों से मिला आशीर्वाद संकट मोचक तक बताया गया है।

जिन लोगों की कुंडली में पितृदोष होता है, उन्हें रोज सुबह अपने घर के बड़ों का आशीर्वाद लेना चाहिए। इससे पितृदोष और भौतिकवाद के कामों में आ रही रूकावट दूर होती है।

सरल शब्दों में मतलब है कि जो व्यक्ति हर रोज बड़े-बूढ़ों के सम्मान में प्रणाम व चरणस्पर्श कर सेवा करता है। उसकी उम्र, विद्या, यश और शारीरिक ताकत बढ़ती है। इसलिए यदि जीवन में

सफलता चाहिए, तो रोज बिना नागा घर के बड़ों के चरण स्पर्श करने चाहिए।

असल में, बड़ों के सम्मान से आयु, यश, बल और विद्या बढ़ने के पीछे मनोवैज्ञानिक एवं व्यवहारिक वजह भी है। चूंकि सम्मान देते समय खुशी का भाव प्रकट होता है, जो देने व लेने वाले के साथ आस-पास के माहौल में भी उत्साह, उमंग व ऊर्जा भरता है और बढ़ाने में प्रसन्नता, ऊर्जा और बहतर माहौल ही अहम व निर्णायक होते हैं।

वहीं, सम्मान देना व्यक्ति का गुणी और संस्कारित होने का प्रमाण होने से, दूसरे व्यक्ति भी उसे सम्मान देते हैं। यही नहीं, ऐसे व्यक्ति गुणी और ज्ञानी लोगों का संग व आशीर्वाद कई रूपों में प्राप्त होता है और बड़ी शक्ति बनकर बहतर नतीजे तय करता है। अतः बड़ों का सम्मान आयु, यश, बल और ज्ञान के रूप में बहुत ही लाभकारी व सुख देने वाला होता है।

चोट सही जाती है

केदारनाथ का मार्ग सौंदर्य की दृष्टि से जितना अप्रतिम है, चढ़ाई की दृष्टि से उतना ही बीहड़। सौंदर्य सदा काँटों के बीच ही सुरक्षित रहता है। मार्ग बीहड़ है तो चोट भी बहुत लगती है। वह स्वयं अपनी चोटें देखकर चकित हुआ है। कैसे पैदा होता है अमिट साहस और विश्वास, यह वह उस दिन जान सका जब उसने एक वृद्धा को देखा। एक चट्टान पर से लुढ़क जाने के कारण काफ़ी चोटें आई थीं। पैदल चलना असंभव था। उनके साथ कई आदमी थे, सहारा दिया। उनके ज़ख़्म साफ़ किए, दवा लगाई, खाने की दवा दी और उसके बाद उन्हें एक कंडी पर बैठाया। पट्टियाँ बँधी थीं। पीड़ा कभी-कभार कसक उठती थी, पर वह सदा की तरह शांत और हँसमुख बनी रही। सबसे उसी तरह प्यार से बातें करती रहीं। अपने साथियों के साथ वह भी उनके पास गया। शिष्टाचारवश बड़ी विनम्रता से उसने कहा, माताजी, आपको तो बहुत चोट लगी है, फिर भी आप....

बात काटकर वे प्यार से बोलीं, बेटे! तीर्थों में चोट सही जाती है, कही नहीं जाती।

वास्तु

तुलसी से दूर करें वास्तुदोष

भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग तथा सनातन हिंदू धर्म में पूजनीय तुलसी केवल एक पौधा ही नहीं है अपितु यह रोगों के लिए रामबाण औषधि तथा वास्तु दोषों की निवारण कर्ता भी है। घर में तुलसी का पौधा

तुलसी का पौधा घर का वातावरण पूरी तरह पवित्र और कीटाणुओं से मुक्त रखता है। देवी-देवताओं की विशेष कृपा भी रहती है।

उत्तर-पूर्व दिशा में रखें और तुलसी का पौधा जमीन से कुछ उंचाई पर ही लगाना उचित है। घर में वास्तु दोष दूर करने के लिए इसे दक्षिण-पूर्व से लेकर उत्तर पश्चिम तक किसी भी खाली कोने में लगाया जा सकता है। यदि खाली स्थान ना हो, तो गमले में भी तुलसी के पौधे को लगाया जा सकता है। तुलसी के पौधे को लगाया जा सकता है। तुलसी का पौधा किचन के पास रखने से घर के सदस्यों में आपसी सामंजस्य बढ़ता है। अगर संतान बहुत ज्यादा जिद्दी और अपनी मर्यादा से बाहर है तो पूर्व दिशा में रखे तुलसी के पौधे के तीन पत्ते रोज उसे किसी ना किसी तरह खिला दें। यदि आपकी कन्या का विवाह नहीं हो रहा हो, तो तुलसी के पौधे को दक्षिण-पूर्व में रखकर उसे नियमित रूप से जल अर्पण करें। इस उपाय से जल्द ही योग्य वर की प्राप्ति होगी। यदि आपका कारोबार ठीक से नहीं चल रहा है तो तुलसी के पौधे को नैऋत्य कोण में रखकर हर शुक्रवार को कच्चा दूध चढ़ाएं। तुलसी का पौधा घर में होने से घर वालों को बुरी नजर प्रभावित नहीं कर पाती और अन्य बुराइयां भी घर और घरवालों से दूर ही रहती है। तुलसी का पौधा घर का वातावरण पूरी तरह पवित्र और कीटाणुओं से मुक्त रखता है।

सेहत

गर्मी में लाभदायक अदरक

अदरक को हम अक्सर चाय से ही जोड़कर देखते हैं। अदरक काफी हद तक कैंसर जैसी बीमारी से बचाव करता है। अदरक को स्तन कैंसर, प्रोस्टेट कैंसर और कोलोन कैंसर के इलाज में भी कारगर पाया गया है। टाइप 2 डायबीटीज में अदरक के सेवन से ग्लूगोज बिना इंसुलिन के स्नायु

किसी को गठिया की दिक्कत और जोड़ों में दर्द रहता है तो रोज इस पानी का सेवन करें।

कोशिकाओं तक पहुंच सकता है। इससे हाई शुगर लेवल को कंट्रोल किया जा सकता है। अदरक का सेवन दिल को सेहतमंद रखने का काम करता है। अदरक के तेल का उपयोग या इसका सेवन हार्ट अटैक के खतरे को कम करता है। अदर पेट फूलने, गैस की दिक्कत, पेट में मरोड़ जैसी कई परेशानियों को दूर कर पाचन तंत्र को मजबूत बनाता है। माइग्रेन शुरू होते ही अदरक की चाय पीने से प्रोस्टेग्लैंडिन दब जाते हैं। इससे असहनीय दर्द में राहत मिलती है। साथ ही माइग्रेन से जुड़ी उबकाई और चक्कर की समस्या भी कम होती है। अदरक उन्हें तुरंत आराम दिलाता है। आमतौर पर एक वयस्क व्यक्ति को 4 ग्राम से ज्यादा अदरक का सेवन नहीं करना चाहिए। गर्मियों में इसकी मात्रा और भी कम कर देनी चाहिए। प्रेग्नेंसी के समय अदरक का ज्यादा सेवन करने से भ्रूण के सेक्स हार्मोंस प्रभावित हो सकते हैं। कई परिस्थितियों में अदरक के अत्यधिक सेवन से गर्भपात भी हो सकता है। डायबीटीज के वह रोगी जो दवाई भी ले रहे हैं और अदरक का सेवन भी अधिक मात्रा में कर रहे हैं, उनका ब्लड लेवल तेजी से कम हो सकता है। इसलिए इसका इस्तेमाल सीमित मात्रा में करें।

जानकारी

गुरू के प्रति श्रद्धावान रहिए

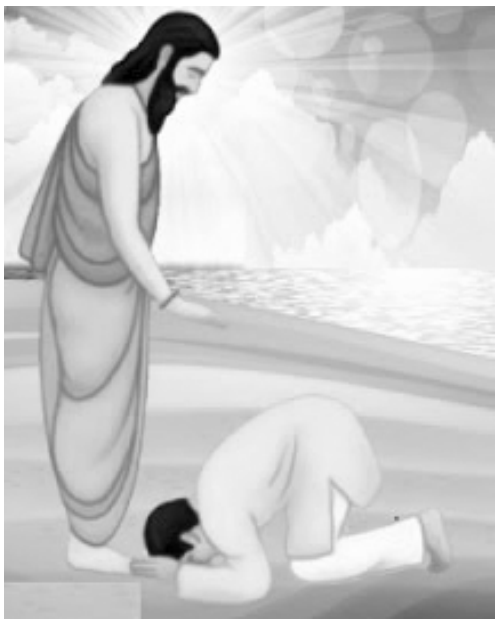

श्रद्धावानं लभते ज्ञानम्। आत्मज्ञान के लिए गुरु के प्रति श्रद्धा का होना बड़ा आवश्यक है। गुरु के प्रति श्रद्धा होने से गुरु द्वारा दिया गया ज्ञान शिष्य के हृदय में उतरने लगता है, अन्यथा श्रद्धा के बिना वह ज्ञान, शब्दों के रूप में बुद्धि में इकट्ठा हो जाता है। शिष्य में जब ज्ञान की जिज्ञासा होती है तब उसकी गुरु में श्रद्धा जगने लगती है। जब व्यक्ति को लगे कि मुझे ज्ञान, प्रेम और आनंद चाहिए, तब गुरु में श्रद्धा जगती है। जब व्यक्ति को लगे कि मुझे हर पल खुशी से जीने की कला सीखनी चाहिए और यह मुझे गुरु ही सिखा सकता है, तब गुरु में श्रद्धा जगती है। जब शिष्य को जीवन का उद्देश्य जानना हो, तब गुरु में श्रद्धा जगती है। जब प्रकृति की तरफ व्यक्ति की पकड़ ढीली और गुरु की तरफ ज्यादा होने लगती है, तब श्रद्धा जगती है। यदि व्यक्ति को प्रकृति में रस आता है और गुरु केवल नाम के लिए है तब शिष्य की श्रद्धा हिलती रहती है। जब गुरु का पलड़ा भारी हो जाए, तब श्रद्धा जगती है। जब जीवन में गुरु ही महत्वपूर्ण लगे, तब श्रद्धा जगती है।

जब गुरु का पलड़ा भारी हो जाए, तब श्रद्धा जगती है। जब जीवन में गुरु ही महत्वपूर्ण लगे, तब श्रद्धा जगती है।

शुरू में व्यक्ति गुरु के पास अपनी घर-गृहस्थी की प्रकृति को सुलभ करने के लिए आता है और गुरु से वैसे ही प्रश्न करता है। लेकिन गुरु अपने शिष्य की प्रकृति को सुलभ नहीं करता, बल्कि आत्मज्ञान देता है, जिससे शिष्य की प्रकृति अपने आप सुलभ हो जाती है। श्रद्धा का शिष्य

की घर-गृहस्थी की उलझन से सीधे लेना-देना नहीं है। श्रद्धा केवल ज्ञान से बढ़ती है। इसलिए शिष्य का प्रश्न प्रकृति का होता है और गुरु केवल ज्ञान बोलते हैं। प्रकृति का प्रश्न होने पर भी गुरु उत्तर ज्ञान का ही देते हैं। गुरु के ज्ञान से शिष्य की बुद्धि का विकास होने लगता है, जिससे प्रकृति में उलझी बुद्धि खुल जाती है। गुरु का ज्ञान हमारी बुद्धि को बड़ा करता है। जैसे 50 लीटर के पात्र में आधा लीटर दूध बहुत कम लगता है, लेकिन आधा लीटर के पात्र में वह दूध ज्यादा दिखता है, ऐसे ही प्रकृति में उलझी बुद्धि छोटी होती है लेकिन जब गुरु बुद्धि का विकास करते हैं, तब प्रकृति की उलझन परेशान नहीं करती। गुरु के पास जब व्यक्ति आता है तब वह ज्ञान के हिसाब से अल्पबुद्धि या बुद्धिहीन होता है, गुरु के ज्ञान से बुद्धि खुलती जाती है। गुरु प्रकृति को सुलझाने के लिए नहीं है बल्कि गुरु के ज्ञान से प्रकृति सुलझ जाती है। गुरु जानते हैं कि शिष्य की प्रकृति आज सुलभ हो जाएगी, लेकिन कल फिर उलझ जाएगी। इसलिए गुरु प्रकृति को सुलझाने वाला ज्ञान ही देते हैं।

॥ श्री गुरूहरिः ॥

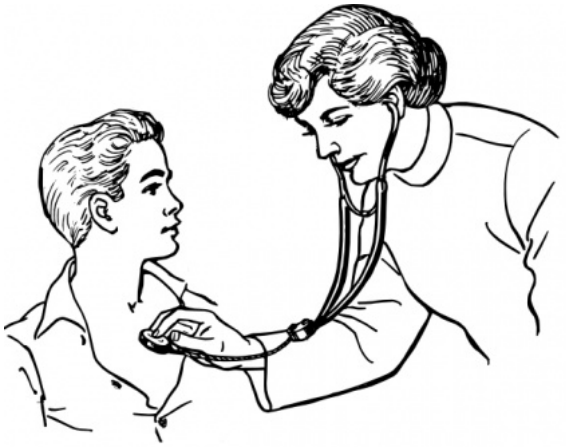

श्री सिद्धदाता आश्रम

श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम

प्रांगण में जनहित सेवा चेरीटेबल ट्रस्ट द्वारा संचालित

निःशुल्क विशाल चिकित्सा शिविर

प्रत्येक रविवार प्रातः नौ बजे से

उच्च प्रशिक्षित चिकित्सा विशेषज्ञों एवं उनके सहयोगियों द्वारा आयुर्वेद, अंग्रेजी, होम्योपेथी व प्राकृतिक चिकित्सा के माध्यम से रोगियों को बेहतर और निशुल्क चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध हो रही हैं।

वैकुंठवासी गुरू महाराज की कृपा एवं अनंत श्री विभूषित इंद्रप्रस्थ एवं हरियाणा पीठाधीश्वर श्रीमद् जगद्गुरू रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरूषोत्तमाचार्य जी महाराज के आशीर्वाद से शिविर अपनी उपयोगिता स्वयं सिद्ध कर रहे हैं। अब तक लाखों जरूरतमंद इसका लाभ उठा चुके हैं और सैकड़ों मरीज प्रतिदिन अपना इलाज कराकर लाभांवित हो रहे हैं।

आप में से कितनों ने "गुरुवचनों का प्रचार" की सेवा की है। गुरू महाराज के वचनों के अनुसार शास्त्र कहते हैं- जो शिष्य गुरु के वचनों का प्रचार प्रसार करता है, उनको अंगीकार करता है वास्तव में वह सबसे बड़ी सेवा करता है। मुझे पता है कि आप इस अमृत को प्राप्त कर रहे हैं, लेकिन जिस अमृत को आपने प्राप्त किया, जिस बाबा की छांव में आपने अपने जीवन को संवारा.. उस कृपा को, उस अमृत को दूसरों में भी बांटिए... आपश्री से प्रार्थना है कि श्री सुदर्शन संदेश पत्रिका के सदस्य हर माह एक नया सदस्य जोडें..

श्री गुरु महाराज की कृपा से स्थापित व प्रकाशित मासिक पत्रिका श्री सुदर्शन संदेश के प्रचार प्रसार के लिए प्रण लें, इससे गुरु की कृपा पाने वालों में अभिवृद्धि होगी। आप किसी के भले में सहायक होंगे, निश्चित तौर पर इसका सुफल आपको प्राप्त होगा- संपादक

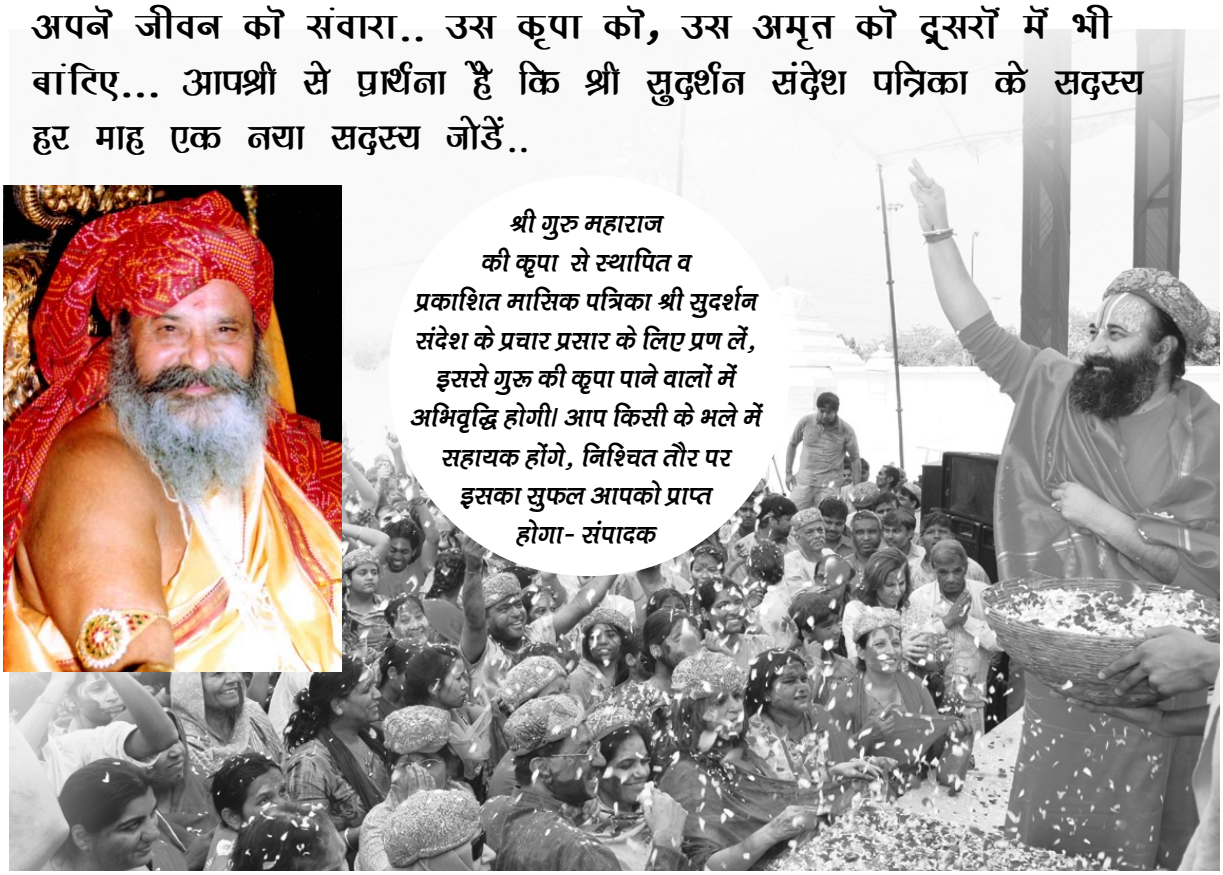

बात बात में

मानव जीवन मोक्ष के लिए

जब मनुष्य को मानसिक अथवा आध्यात्मिक जगत में चलना है, तब सामने उसका कोई स्थूल लक्ष्य नहीं रह सकता है। मानसिक जगत में मनुष्य को जब चलना पड़ता है तो हमेशा मन में यह याद रखना पड़ता है कि हमें इस व्रत को पूरा करना है।

सामने व्रत रहना फर्ज है। व्रत नहीं है तो मानसिक प्रयास अर्थहीन हो जाएगा।

यह बात जब तक याद है तब तक मानसिक जगत में प्रगति होती रहती है। मनुष्य की चेतना में उत्तरोत्तर विकास होता रहता है। जैसे विद्यार्थी पढ़ रहे हैं तो उन्हें परीक्षा में पास होना याद रखना है। अगर पास करने के संबंध में वह नहीं सोचता, केवल पढ़ने के खातिर पढ़ रहा है तो वह परीक्षा में पास नहीं कर सकेगा। हालांकि पठन-पाठन स्वयं के लिए भी होता है परंतु विद्यार्थी को परीक्षा का ध्यान भी रखना ही होता है। यही व्रत है। अगर कोई अधिक दिन जीवित रहता है तो वह अधिक काम कर सकेगा। लेकिन अगर तुम कर्म करना नहीं चाहोगे, जिसके लिए कि तुम दुनिया में आए हो तो तुम दुनिया पर बोझ हो। मानसिक क्षेत्र के ऊपर आध्यात्मिक क्षेत्र है। आध्यात्मिक जगत में भी केवल अपने मिशन के विषय में चिंतन करना ही पर्याप्त नहीं है, क्योंकि मिशन का उद्देश्य है बाहरी जगत की सेवा करना।

'आत्ममोक्षार्थ जगद् हिताय च।' मतलब मनुष्य का जीवन जग के हित के लिए तो है है, स्वयं के मोक्ष के लिए भी है। आत्म के मोक्ष के लिए जो प्रयास नहीं करते हैं, साधना नहीं करते हैं, उनसे दुनिया की भी खिदमत नहीं होती है।

नित्यकर्म

इच्छाओं की स्लेट साफ करें

इन इच्छाओं से ऊपर उठकर अपने भीतर संतुष्ट भाव में आ जाओ। कभी आराम से बैठकर सोचना की आज तक इतनी इच्छाएं पूरी भी हुई हैं तो आखिर उनसे हुआ क्या है। आज भी हम अपने को ज्यों का त्यों अपूर्ण ही अनुभव कर रहे हैं। अपने भीतर जुड़कर अपनी पूर्णता को जानो और पहचानो कि आप पूर्ण हैं। क्योंकि हम पूर्ण से ही बने हैं और अंत में पूर्ण में ही मिल जाएंगे।

इससे पहले कि जीवन पूरा हो जाए, इच्छाओं को ही पूरा कर दो।

तो यह बीच में अपूर्णता में क्यों फंस रहें। यह पूर्णता का भाव आनंद, शांति और प्रेम की ओर ले जाएगा और अपूर्णता का भाव दु:ख, परेशानी, हताशा और बंधन की ओर ले जाएगा। हर व्यक्ति अपने जीवन में अनेक इच्छाओं के साथ जीता है और जीवन भर उनको पूरा करने में लगा रहता है। कुछ पूरी हो जाती हैं और कुछ बची रह जाती हैं। मरने के साथ अधूरी इच्छाएं भी चित्त में अपनी छाप छोड़ जाती हैं। चित्त में पड़ी इन अधूरी इच्छाओं की पूर्ति के लिए व्यक्ति को फिर जन्म लेना पड़ता है, क्योंकि जब तक चित्त की सफाई नहीं हो जाती तब तक जन्म-मरण का सिलसिला चलता रहता है। फिर जब नया जन्म मिलता है, तब इस जन्म में भी अनेक इच्छाएं पैदा हो जाती हैं। पुरानी इच्छाओं के साथ इस जन्म की इच्छाएं जुड़ती जाती हैं और इस प्रकार हम इच्छाओं के पुतले बन जाते हैं। इच्छाओं का यह पुतला जीवन मरण के चक्र से बंधन मुक्त नहीं हो पाता है। यदि सामने वाला आपकी इच्छा पूरी कर देता है तो उससे और गहरे संबंध बना लेते हैं, लेकिन यदि सामने वाला इच्छा पूरी नहीं करता तो उससे द्वेष कर बैठते हैं। जहां इच्छा पूरी होती है या पूरी होने की संभावना रहती है, वहां राग हो जाता है और जो इच्छा पूरी होने में रुकावट डालता है उनसे द्वेष हो जाता है। इसमें संबंध नजदीकी हो या दूर का, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

बाबा कहते हैं

शरणागति कैसे हो

निराकार की शरणागत हों कैसे, बताइए। जिसका आकार ही नहीं, कहां शरणागति स्वीकार करेगा।

भगवान् शिवजी पद सरोज कहते

श्रीमद् जगद्गुरू रामानुजाचार्य स्वामी श्री पुरूषोत्तमाचार्य जी महाराज,
पीठाधिपति-श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम

हैं। जब पद उसके हैं ही नहीं तो सरोज कहां रह गए। अर्थात् पद सरोज तभी हैं, जब वो साकार हैं। साकार भगवान की शरणागति होती है। शरणागत हो जाने के बाद विशेष प्रकार के उपायों की जरूरत नहीं रह जाती। हम तो केवल यह स्वीकार कर लें कि भगवान मेरे हैं। मैं भगवान का हूं और मैं जो भी काम कर रहा हूं, भगवान के लिए कर रहा हूं। यह मकान मैं जो बना रहा हूं, भगवान के लिए बनवा रहा हूं। ठीक है, उसमें हमारे बाल-गोपाल ही रहेंगे, पर भगवान के लिये – तुभ्यमेव समर्पयेत्। इतना भाव ले आना ही शरणागति की प्रथम श्रेणी में तो नहीं पर द्वितीय श्रेणी में आ जाता है। धन भी तेरा, ये बच्चे भी तेरे, मैं भी तेरा और तू मेरा। खाना शरणागत भी खाते हैं और जो नास्तिक हैं वे भी खाते हैं। खाते सब हैं परन्तु खाना खाने का तरीका है। एक भगवान् का प्रसाद मानकर खाता है। एक स्वाद के लिए खाता है। एक जीने के लिए खाता है। खाते तो सभी हैं पर खाने

का भाव बदल गया। वह खाने वाला शरणागत भगवान् का प्रसाद मान कर खाता है। हे प्रभु! जो आपने दिया वह मेरे लिए प्रसाद है। सूखी रोटी दे दी तो बढ़िया और आज बिलकुल ही नहीं दिया तो बहुत बढ़िया। हो सकता है हमारे पेट में मैल जमा हो रहा हो। पेट साफ हो जाएगा। बहुत अच्छा हुआ। मेरे कहने का भाव है, शरणागत होने के बाद विशेष प्रकार की इच्छायें नहीं रखनी चाहिये। वो परमात्मा जितना अधिक जानता है, उतना हम नहीं जान सकते।

आप विचार कीजिए कि एक साधारण मां बच्चे को मारती है। पर मारना भी दो प्रकार का है। एक शत्रु मारता है। वह ऐसी जगह गोली मारेगा या खोपड़ी में डण्डा मारेगा कि बचे ही नहीं। और मां भी मारती है, पर वह मारने के लिए नहीं मारती। मां भी मार रही है और एक शत्रु भी मार रहा है। शत्रु मारने के लिए मारता है, मां समझाने के लिए मारती है। मार-पीट करने के बाद मां एकान्त में बैठकर रोती है। वह विचार भी करती है कि वह हत्यारिन तो नहीं है। मां ने इसीलिए मारा है कि बच्चा समझ जाये। बच्चे का भविष्य उज्ज्वल हो जाये। बच्चे आईन्दा ऐसी गलती न करें। उसके लिए उसने मारा है। मां को पता है कि इससे उसकी गलतियां दूर हो जाएंगी। कई बार देखते हैं कि मां रोटी बन्द कर देती है। पर इससे वह स्वयं सुखी नहीं होती। वह विचार करती है कि यह सब बच्चे की शिक्षा के लिए कर रही हूं। मां बच्चे के उत्तम भविष्य के लिए ऐसा करती है। इसी तरह भगवान् या सन्त को क्या शिष्यों से दुश्मनी है? बिलकुल नहीं। भगवान् तो परम दयालु हैं – सन्त हृदय नवनीत समाना। घी तो फिर भी थोड़ी आंच से पिघलता है पर मक्खन तो हाथ लगाते ही पिघलना शुरू हो जाता है। कितना कोमल है वो? इस तरह भगवान का कोमल चित्त है। क्या वे दुख देना चाहेंगे? पर वो दुख क्यों देते हैं। वो चाहते हैं कि इसके जन्म-जन्मांतरों के पाप कटें ताकि यह मेरे घर का बन जाये और अगर यह पाप में लिप्त रहा तो यह मेरे घर का बनेगा ही नहीं। फिर यह कहीं सूकर-कूकर योनि में जाएगा। फिर मुझे दुख होगा। इसलिए भगवान् हमारी शिक्षा-दीक्षा के लिए, हमें उत्तम बल देने के लिए, उत्साह देने के लिये, ऐसा करते हैं क्योंकि मानव ही तो भगवान् से मिलेगा। दानव भगवान से कैसे मिलेगा, बताइये। इसीलिए मानव बनाने के लिए हमको भगवान् समय-समय पर कष्ट देते रहते हैं अर्थात् स्मृति दिलाते रहते हैं। तो शरणागत शिष्य के मन में कभी ऐसे भाव आने ही नहीं चाहियें। हम भगवान के शरणागत हों, उनके वैभव के शरणागत न हों।

भगवान रामजी की शरणागत तुलसीदासजी हो गए। एक सन्त आकर कहने लगे, तुलसीदास जी! आप कौन से भगवान की शरणागत हैं। तो तुलसीदास जी बोले, आप किसकी शरणागत हैं? सन्त बोले, हम 20 कला के अवतार श्री कृष्णजी की शरणागत हैं। तुलसीदास जी बोले, मैं तो रामजी की शरणागत हूं। सन्त बोले, रामजी तो 16 कला के अवतार हैं। तुलसीजी बड़े प्रसन्न हुए, नाचे। कहने लगे,

आज तक तो मैं यही जान रहा था कि रामजी राजा दशरथ के बेटे हैं। आपने तो बहुत बढ़िया बात मुझे बता दी कि राम सोलह कला के अवतार हैं। इस तरह शरणागत होने के बाद शरणागत ही रहें। शरणागति पहले ही ढूंढ कर करें कि त्रिभुवनपति की शरणागत हूं मैं। तैंतीस करोड़ देवता जिसकी आराधना करते हैं, मैं उसकी शरणागत हूं। और शरणागत होने के बाद में यदि मानव बुद्धि से काम करें, बुद्धि का सहारा लें, तर्क करें तो भगवान् कहते हैं कि जिसके लिए तू आया है वह ले ले। तू जिस काम के लिए मेरे पास आया है, वह ले ले, और अपने घर जा। तू शरणागत है ही नहीं।

शरणागत के लिए भगवान् चौबीसों घंटे बिके हुए रहते हैं। भगवान चौबीसों घंटे शरणागत के लिए नौकर बनने को तैयार हैं। क्या भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथी यानी ड्राइवर नहीं बने। गाड़ी जो चलाये सो ड्राइवर। ड्राइवर बने अर्थात् नौकर बने। गोपिकाओं के नौकर बने और प्रत्येक शरणागत भक्त के नौकर बनते ही चले आये हैं। इसके लिए शरणागत होना बहुत जरूरी है।

शरणागति विभीषण ने स्वीकार कर ली और उसे भगवान से स्वर्ण की लंका प्राप्त हुई।

सकुचि दीन्ह रघुनाथ।

भगवान् श्रीराम जी ने संकोच करके, नीचा सिर करके दे दी कि हे विभीषण! मैं तुझे कुछ दे ही नहीं रहा हूं।

नरसी मेहता जब शरणागत हो गया तो उस समय भगवान् ने 56 करोड़ का भात भरा, नरसी की लड़की नैनाबाई का। सवा पहर कंचन की वर्षा के बाद भी भगवान उससे क्षमा मांग रहे हैं कि नरसी भक्त! मैं तेरे ब्याज का ब्याज भी नहीं दे पाया। अर्थात् भगवान कहते हैं कि मैं तो तेरा ऋणी रहूंगा। शरणागत होने के बाद वह भगवान् कभी भी उऋण नहीं होते, ऋणी ही बने रहते हैं। गीता में भगवान कहते हैं कि शरणागत भक्तों के ताप-सन्ताप का वजन मैं स्वयं ढोता हूं। उनकी विपत्तियों को मैं स्वीकार कर लेता हूं।

ऐसा सुनने में आता है कि सिद्धदाता आश्रम की शरणागति होने के बाद मेरी आंख में दर्द क्यों हो गया? अरे भाई, जब लू चलती है तो आंखें दुखने लग ही जाती हैं। बुखार क्यूं आ गया? सिर में दर्द क्यूं हो गया? अर्थात् शरणागति व्यापार का विषय नहीं। कर्म विपाक अलग है और शरणागति अलग है। शरणागति विषय अपने पथनिर्माण के लिए, आवागमन को मेटने के लिए और गोलोक की प्राप्ति के लिए है। जहां सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि का प्रकाश नहीं, उस दिव्यलोक की प्राप्ति के लिए शरणागति है और वह हमारी बार-बार रक्षा करता रहे, इसलिए शरणागति है। कामना के लिए शरणागति नहीं। इस पहाड़ी पर हम धन कमाने के लिए या भेंट दक्षिणा लेने के लिए नहीं आये। आप आयें तो सौदेबाजी के भाव से और कहें कि हम शरणागत हैं, यह गलत बात है। शरणागत हैं तो शरणागत हैं। कामना के लिए भी खूब आयें, दुख कष्ट निवारण के लिए भी आयें, मोक्ष के चाहने वाले भी आयें और धन के चाहने वाले भी खूब आयें। यह दर चारों भक्तों के लिए खुला हुआ

है और यदि चारों भक्तों को उनकी कामना की प्राप्ति न हो तो इस बाबाजी का आश्रम बनाना बेकार है। मेरे मालिक का फरमान है कि चारों भक्तों को मिलेगा। पर वहां गलत बात हो जाती है जहां शरणागत है नहीं और शरणागत का बहाना कर रहा है, और कहता है कि मैं तो शरणागत हूं। अपने को आर्त कहे, धनार्थी कहे, ऐसा ही बोले। मैं शरणागत नहीं, दुखियारा हूं, अर्थार्थी हूं, भोगार्थी हूं। गलत व्यक्ति की दरबार नहीं सुनता। मैं तो कहता हूं कि जब दुख मिटेंगे तो वह शरणागत भी हो जाएगा। इसलिए सभी यहां आयें। अर्थार्थी भी आयें। अंतत: वह शरणागति की ओर ही बढ़ेंगे।

शरणागति में कामना अर्थात् 'चाहना' नहीं होती। शरणागत को प्रभु की चाह हो जाती है, सांसारिक चाहना नहीं रहती। 'चाहना' में चिंता है, 'चाह' में चिंता नहीं। शरणागत की चिन्ता उसको रहती है जिसके वह शरणागत है। फिर भगवान् पुकारते हैं। भगवान् ही स्वयं करुण-क्रन्दन करते हैं कि मेरे भक्त के साथ ऐसा हो गया। अगर सच्चा शरणागत है तो विधि के लेख भी मिट जाते हैं। बाल्मीकि हत्यारे को बाल्मीकि ऋषि बना दिया। क्या विधाता के अंक नहीं मिटे? नारदजी देवदासी पुत्र थे। देवर्षि बन गए। क्या विधाता के अंक नहीं मिटे? विधाता के अंक तभी मिटते हैं जब जीव भगवान् की सच्ची शरणागत हो जाता है।

मेटत कठिन कुअंक भाल के।
उलटा नाम जपत जग जाना।
बाल्मीकि हुए ब्रह्म समाना।।

नाम में इतनी ताकत है। इसलिए उस नाम (भगवान्) की शरणागत हमें हो जाना है और उसको स्वीकार करना है।

'शरण' शब्द सारों का सार है। इससे ऊपर चरम लक्ष्य अर्थात् चरम उपाय और है ही नहीं। शरणागति के बिना दिव्यलोक प्राप्त नहीं हो सकता। दानी बनके भोग, भोग सकते हैं पर वह लोक प्राप्त नहीं हो सकता। और भक्ति करने से आपको पुन: अवसर मिल सकता है, दिव्यलोक प्राप्त नहीं हो सकता। उस लोक की प्राप्ति तो एक 'शरण' शब्द ही है। यह शरणागति बहुत चरम उपाय है। भगवान् श्रीकृष्ण भी गीता के अन्तिम सन्देश में यही कहते हैं कि अर्जुन –

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

तू सब उपायों को छोड़ दे क्योंकि मैं उपायों से नहीं मिलता। अगर भगवान् उद्योग से, उपाय से मिलने लगें, तो क्या वह धन है जो मेहनत से मिल जायेंगे? बिल्कुल नहीं, वह तो शरणागति में ही मिलते हैं। शरण के अलावा और कोई उनका उपाय है ही नहीं। भगवान् शिव बड़े सरल शब्दों में भगवान नारायण से कहते हैं – बार-बार बर मांगऊं हरषि देहु श्रीरंग। पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग।।

हे श्रीजी के साथ रमण करने वाले भगवान, मैं आपसे एक ही प्रार्थना करता हूं, एक ही वरदान मांगता हूं। (अनपायनी शब्द का अर्थ है – शरणागति।) हे प्रभु! मैं आपकी शरणागति स्वीकार करना चाहता हूं और आप की कथा प्रसंगों में मेरा सदा मन लगा रहे। ऐसे अवसर मुझे बार-बार मिलते रहें ताकि मैं आपका कथा प्रसंग सुनता रहूं।

पते की बात

भक्ति जग जाए तो बेड़ा पार

मनुष्य का दिमाग तो छोटा सा है, जो उसे परमपुरुष या परमात्मा से मिला है। उस दिमाग से वह परमपुरुष को मापेगा कैसे? वह कैसे समझेगा कि परमपुरुष किस तरह के हैं? इसके उत्तर में ज्ञानियों का कहना है कि मनुष्य का यह छोटा सा दिमाग ज्ञान के सागर में तैरना सीख ले, तो समझ सकता है कि परमपुरुष क्या है, परमात्मा क्या है अथवा क्या सही है।

भक्ति ही एकमात्र रास्ता है, परम पुरुष को पाने का। भक्ति जग गई तो काम पूरा हो गया।

थोड़ी उम्र बढ़ने से बुद्धि चली जाती है। एक 22 साल का युवा जितना याद रख सकता है, उसके जितना एक 80 साल का बूढ़ा आदमी नहीं याद रख सकता। ऐसा होना लाजमी भी है। तो फिर कहते हैं कि ज्ञान से यह समझ लेंगे कि वह (मनुष्य) क्या है। असल में मनुष्य खुद ही यह नहीं जानता कि वह कौन है। आज से दो सौ साल पहले तुम कौन थे, नहीं जानते और फिर दो सौ साल बाद कहां रहोगे, यह भी नहीं जानते। इसलिए यह कहना भी सही नहीं है कि ज्ञान से आगे के बारे में जाना जा सकता है। हां, ज्ञान से कुछ हद तक मन की तृप्ति होती है, कुछ हद तक वह दूसरों को समझा सकता है, यह कहना सही है। ऐसा नहीं कि ज्ञान की चर्चा न करो। जब तक ज्ञान की भूख है तब तक ज्ञानार्जन करते रहो। जब यह भूख बुझ जाए, जब महसूस होने लगे कि ज्ञान से कुछ होने वाला नहीं है, तो ज्ञान की राह छोड़ो। इसके पहले ज्ञान की राह छोड़ने की आवश्यकता नहीं। फिर, कुछ लोग कहते हैं कि कर्म से परम पुरुष को पाएंगे। यह ठीक है, क्योंकि

परम पुरुष के पास चलना भी कर्म ही है और कर्म के बिना मनुष्य नहीं रह सकते हैं। श्वास-प्रश्वास की क्रिया भी कर्म है। कर्म करना चाहिए, किंतु सही कर्म करना चाहिए। यदि वह अकर्म है या विकर्म है तो उससे कोई खास फायदा नहीं होना। अर्थात ज्ञान की जितनी धार्मिक, आध्यात्मिक जगत में कीमत है, उससे कम कीमत कर्म की नहीं है। अगर परम पुरुष की खोज को लेकर कर्म किया तो ठीक ही है।

यहां हर व्यक्ति अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए पैदा हुआ है। दूसरा कोई आपकी इच्छाओं को पूरा करने के लिए पैदा नहीं हुआ है। दूसरा, जिससे आप अपनी इच्छा की पूर्ति चाहते हो, वह भी अपनी इच्छा को पूरा करने में लगा है। जब आप अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए दूसरों को कहोगे, तो वह अपनी इच्छा को पूरा करने के लिए आपको कहेगा। आप उसकी इच्छा पूरी करते रहो, वो आपकी इच्छा पूरी करता रहे। यह जीवन नहीं है, क्योंकि इच्छाएं कितनी भी पूरी हो जाएं, फिर भी बाकी रह जाती हैं। यह जन्म सबने अपनी अधूरी इच्छाओं को पूरा करने के लिए लिया है। इन अधूरी इच्छाओं को पूरा करने के लिए हम नए-नए संबंध बनाते हैं। जहां से कोई भी इच्छा पूरी होने की संभावना रहती है, वहां संबंध बनाने की कोशिश करते हैं। रह जाती हैं। भक्ति के विषय में तो बड़े-बड़े ज्ञानी भी अंत में मान लेते हैं कि 'मोक्षकारण समग्रयां भक्तिरेव गरीयसी'। वे यह नहीं मानते कि भक्ति ही एकमात्र रास्ता है क्योंकि बड़े-बड़े ज्ञानी हैं। वे अगर यह मान लें कि भक्ति एकमात्र रास्ता है तो उनके ज्ञान की कोई कीमत ही नहीं रहेगी। अत: वे अपने ज्ञान की कीमत बचाने के लिए कहते हैं कि 'भक्तिरेव गरीयसी'। भक्ति ही एकमात्र रास्ता है, परम पुरुष को पाने का। भक्ति जग गई तो काम पूरा हो गया। भक्ति को जगाने के लिए मनुष्य ज्ञान की चर्चा करें, कर्म की चर्चा करें। जब तक पूरे तौर से भक्ति जगती नहीं है तब तक ज्ञान, कर्म की जरूरत है। तब तक मनुष्य ज्ञान, कर्म की चर्चा करते रहें और जब भक्ति जग गई तो परम पुरुष से प्रेरणा लेकर काम करें। क्योंकि एक बार भक्ति जग गई तो बेड़ा पार समझिए।

सत्य की मिठास

वैसे सत्य को जानना कठिन नहीं है, बल्कि सत्य को समझना, सुनना और सत्य आचरण करना कठिन जरूर है। सत्य एक ऐसा तथ्य है, जिसमें बड़े-बड़े ज्ञानी भी भ्रमित हो जाते हैं। सत्य को समझने के लिए एक तार्किक बुद्धि की आवश्यकता होती है और तार्किक बुद्धि भ्रम और द्वंद्व के मिटने से आती है। जब हमारा मन, वचन और कर्म एक समान हो तो हमारा भ्रम मिट जाता है और हम सत्य को समझने लगते हैं।

बाबा का संदेश

मानव जीवन की सार्थकता

वैकुंठवासी जगद्गुरू रामानुजाचार्य स्वामी सुदर्शनाचार्य जी महाराज
संस्थापक-श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम

मेरे प्रेमियो! यदि हम हर रोज शरीर को याद करते रहें, भगवान् को याद करें या न करें, यह तुम्हारी मर्जी है, दान दो या न दो, यह तुम्हारी मर्जी है, पर यह परमात्मा ने जो हमको दान दिया है –यह शरीर; इसको हम याद करते रहें। पहले तो विचार करें कि मैं कौन हूं। अगर मैं शम्भुदयाल हूं, स्वामी सुदर्शनाचार्य हूं तो मैं आया कहां से हूं। और कहीं से आया हूं तो उसने कुछ काम करने के लिए तो भेजा होगा यहां पर। और वह काम मैं कर रहा हूं या नहीं कर रहा हूं। अगर हम कहें कि भगवान् ने हमें बाल बच्चे पैदा करने के लिए भेजा है, इनको पढ़ाने लिखने के लिए भेजा है, इनको धन्धा पानी रोजगार कराने के लिए भेजा है, इसमें तो सुअर, कुत्ता हम से कम नहीं है। सुअर एक बार ही में 12 बच्चे पैदा करता है। तो बाल बच्चे पैदा करने में और योनि भी हमारी ही तरह हैं। हम ऐसा विचार करें, याद करें कि आखिर मानवता की सार्थकता क्या है। ऐसा विचार, यादगारी हम करते रहें। और जब पता लग जाये कि वास्तव में जिस काम के लिए हमें भेजा गया है, वह काम हम नहीं कर रहे हैं, हम तो और-और काम कर रहे हैं तो हमें आहिस्ता-आहिस्ता वे काम कम कर लेने चाहिए और उस काम में अधिक समय देना चाहिए जिसके लिए हम यहां आये हैं। यह यादगारी है।

मेरे प्रेमियो! मैं बार-बार इस बात को इसलिए कहता हूं कि कोई घड़ी, कोई पल, कोई समय, हो सकता है ऐसा आ जाये कि

मानव के भीतर मानवता आ जाये। मानव तो हम हैं पर हमारे अन्दर मानवता नहीं है। हमारे अन्दर 99 प्रतिशत दानवता भरी हुई है। अरे, क्रोध करना दानव का काम है, मानव का तो नहीं है। ईर्ष्या दानव करते हैं, मानव नहीं करते। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह ये जितने भी हैं, ये राक्षस प्रवृति के हैं। हमारे पास तो मानवता का चिन्ह ही नहीं है, कोई थोड़ा बहुत हो तो हो। बाल बच्चों में लगे हुए हैं। यह मानवता नहीं। पशु भी तो उन्हीं कामों में लगा रहता है जिन में हम लगे हुए हैं। और-और धनों का संग्रह कर रहे हैं तो सांप खजाने पर बैठ जाता है। चींटी आप ने देखी होगी। मेरा किसान का घर का जन्म है। मुझे मालूम है जब खलिहानों में अनाज होता है तो वहां चीटियां आती हैं और मनों अनाज वे इकट्ठा कर देती हैं, एक-एक रात में। हम से ज्यादा संग्रह तो वे कर लेती हैं। हम चींटी तो नहीं, मानव हैं।

हमें क्या संग्रह करना है? पूर्व जन्म के जितने भी प्रायश्चित हैं उनका निपटारा करके अच्छे नेक कर्तव्यों का संग्रह करना है। मानवता का संग्रह करना है उस परमात्मा के नाम का संग्रह करना है। सत्संगरूपी हीरे मोती हमारे पास में रहने चाहिये क्योंकि उस देश में ये ही हीरे मोती चलेंगे, वहां हमारे सोने चांदी के सिक्के नहीं चलते। असली सिक्कों को तो हम बकवास कहते हैं, ढौंग कहते हैं। कहते हैं कि फलां आदमी ढौंग करता है। बेकार समय बर्बाद कर दिया। इस देश के हीरे मोती तो यहीं रहने हैं। उस देश के हीरे मोती यहां भी रहेंगे और वहां भी चलेंगे। ये दोनों जगह चलते हैं।

अच्छे कार्यों से मानव वहां स्वर्ग आदि भोगता है और वहां से आकर फिर मानवता में जन्म लेता है। कितनी बढ़िया बात है कि दोनों जगह सिक्के चले। **हम केवल भौतिकवाद के ही सिक्के इकट्ठे न करें, अध्यात्मवाद के सिक्के भी इकट्ठे करें। इस बात का ध्यान हम सदैव ही रखें।**

तुम्हारे भजन से, तुम्हारी पूजा से, महान यज्ञों के द्वारा वह भगवान् मिले न मिले, इसकी गारंटी नहीं क्योंकि अच्छा योगी भी भ्रष्ट हो जाता है। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है –

श्रीमतां शुचिष्मतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते।

मानव योग से भ्रष्ट भी हो सकता है। दानी में अभिमान आ सकता है, प्रतिष्ठा आ सकती है परन्तु कृष्ण कन्हिया नाले प्यार जेड़ा पायेगा, उस भगवान कृष्ण के साथ जिसने प्यार कर लिया, उसका प्यार पा लिया, उसका कल्याण हो गया। क्योंकि भगवान का कहना भी यही है –

जानहुं एक प्यार कर नाता।

मैं और नाते रिश्ते नहीं जानता, न तो मैं किसी का अंकल हूं, न मैं किसी की आंटी हूं, न मैं किसी का डैड हूं, न मैं किसी की मम्मी हूं, न मैं कुछ और-और हूं; मैं तो केवल प्यार की भाषा जानता हूं। दूसरी भाषा भगवान जानते ही नहीं।

कोई घड़ी, कोई पल, कोई समय, हो सकता है ऐसा आ जाये कि मानव के भीतर मानवता आ जाये। मानव तो हम हैं पर हमारे अन्दर मानवता नहीं है। हमारे अन्दर 99 प्रतिशत दानवता भरी हुई है। अरे, क्रोध करना दानव का काम है, मानव का तो नहीं है।

अगस्त महीने के पर्व त्यौहार

एक अगस्त : *शुक्लेकादशी व्रत – श्रावण शुक्ल एकादशी*

तीन अगस्त : *पवित्रार्पणविधि– श्रावण शुक्ल एकादशी*

चार अगस्त : *दधिव्रत – श्रावण शुक्ल द्वादशी*

पांच अगस्त : *प्रदोषव्रत – श्रावण शुक्ल त्रयोदशी*

सात अगस्त : *रक्षाबन्धन– श्रावण शुक्ल पूर्णिमा*

सात अगस्त : *श्रवणपूजन– श्रावण शुक्ल पूर्णिमा*

सात अगस्त : *ऋषितर्पण– श्रावण शुक्ल पूर्णिमा*

10 अगस्त : *कज्जलीतृतीया– भाद्रपद कृष्ण तृतीया*

11 अगस्त : *संकष्टचतुर्थी– भाद्रपद कृष्ण चतुर्थी*

14 अगस्त : *पुत्रव्रत– भाद्रपद कृष्ण सप्तमी*

15 अगस्त : *श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, कालाष्टमी, उमामहेश्वर व्रत– भाद्रपद कृष्ण अष्टमी*

18 ***अगस्त :*** *कृष्णैकादशी– भाद्रपद कृष्ण एकादशी*

19 अगस्त : *वत्सद्वादशी– भाद्रपद कृष्ण द्वादशी*

19 अगस्त : *प्रदोषव्रत*

22 अगस्त : *मौनव्रत– भाद्रपद शुक्ल प्रतिपदा*

24 अगस्त : *हरितालिका– भाद्रपद शुक्ल तृतीया*

25 अगस्त : *सिद्धिविनायक व्रत– भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी*

25 अगस्त : *शिवाचतुर्थी– भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी*

26 अगस्त : *ऋषिपंचमी – भाद्रपद शुक्ल पंचमी*

27 अगस्त : *सूर्यषष्ठी – भाद्रपद शुक्ल षष्ठी*

29 अगस्त : *श्रीराधाष्टमी– भाद्रपद शुक्ल अष्टमी*

29 अगस्त : *महालक्ष्मीव्रत – भाद्रपद शुक्ल अष्टमी*

30 अगस्त : *नन्दानवमी– भाद्रपद शुक्ल नवमी*

31 अगस्त : *दशावतारव्रत – भाद्रपद शुक्ल दशमी*

आपकी खुशियों में वो लोग शामिल होते है जिन्हें आप चाहते है लेकिन आपके दु:ख में वो लोग शामिल होते है जो आपको चाहते है

श्री सिद्धदाता आश्रम में गतिविधियां

1

श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम प्रतिदिन श्री गुरू महाराज सभी भक्तों को प्रसाद प्रदान करते हैं। 1 व 2. बाबा प्रसाद देते एवं भक्त प्रतीक्षा में 3. आश्रम आने वाले भक्त भोजन व्यवस्था का आनंद लेते, 4. बाजू पर शंख चक्र लगाते गुरू महाराज एवं, 5. प्रतीक्षारत नवदीक्षार्थी, 6 सेवा पर अपनी बात रखते प्रोफेसर श्री एम पी सिंह जी 7. आश्रम में सेवा में जुटे भक्तगण, 8. निर्जला एकादशी पर लगी मीठे पानी की छबील का निरीक्षण करते श्री गुरू महाराज एवं 9. लोगों को मीठा ठंडा शर्बत पिलाते सेवादार।

2

3

4

5

6

7

8

9

Postal Regd. No. DL (E)-20/5031/16-18
Regd. under RNI No. DEL HIN/2003/11728
posted on 14 & 15 of every month

आश्रम में आवाजाही

श्री सिद्धदाता आश्रम एवं श्री लक्ष्मीनारायण दिव्यधाम में पधारे 1. जगदगुरू रामानुजाचार्य स्वामी श्री उद्धवाचार्य जी, 2. श्री वरदराज कुंज बडा खटला वृंदावन से स्वामी रामेश्वराचार्य जी, 3. स्वामी श्री सम्पूर्णानन्द ब्रह्मचारी जी, 4. इराक से आए दर्शनार्थी, 5. सुपर्ब मिनरल्स के सीएमडी श्री के सी पांडे जी, 6. देशाटन पर निकले दक्षिण भारतीय भक्त परिवार एवं 7. नेपाल के भक्त के अनुभव सुनते श्री गुरूजी, 8 व 9 आश्रम में निशुल्क चिकित्सा कैंप

1

2

3

4

5

6

7

8

जनहित मानव कल्याण केंद्र के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रहलाद शर्मा द्वारा मयंक ऑफसेट प्रोसेस, 794–795, गुरु रामदास नगर एक्सटेंशन, लक्ष्मीनगर, दिल्ली–110092 से मुद्रित व ई–9 मेन रोड, पांडव नगर, दिल्ली–110091 से प्रकाशित। संपादक–शकुन रघुवंशी अवैतनिक